चन्दामामा
का मासिक पत्र

Photo by P. K. Patel

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

जल में वर्तन

प्रेषक
नगवार महादेव - आबू रोड

चन्दामामा

विषय-सूची

चश्मों की दूकान !	६	परीक्षा का प्रश्न पत्र	६०
मुख-चित्र	८	अंगोछा	३२
भला राजा	९	शब्द-वेधी	३७
महाशासन	१२	हीरामन तोता	४७
मंत्री पद का झगड़ा	१८	रंगीन चित्र कथा चित्र १	५५
धूमकेतु (नया धारावाही)	२१	महाशय खोजी की यात्रा	५६

इनके अलावा फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता, मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर चित्र और कई प्रकार के तमाशे हैं।

बिड़ला लेबोरेटरीज, कलकत्ता-२०

चन्दामामा के अगले महीने की प्रतियाँ, इस महीने के आखिरी सप्ताह में ही डाक से भेजी जाती हैं। जिन को प्रतियाँ समय पर नहीं मिली हों, वे पहले अपने यहाँ के डाकघर में शिकायत करें फिर हमें इसकी सूचना दें।

★

चन्दामामा प्रकाशन

मनोहर सुगंध के लिये . . .

मैसूर बाथ ट्याबलेट्स

मल्लिका की उत्कृष्ट सुवासना सदृश
कोमलता से सुगंधयुक्त की हुई ।

सुप्रसिद्ध **मैसूर सांडल सोप** वालों की तैयारी।

हर जगह मिलता है।

गवर्नमेंट सोप फ्याक्टरी, बेंगलोर ।

(मेंबर ऐ. एस. डि. एम. ए.।)

जे. बी. मंघाराम एण्ड कं, ग्वालियर.
बम्बई एजंट : नेशनल फुड एजन्सी४. ६१५ न्यू चर्नीरोड.

नरिशिंग
बिस्कुट

चन्दामामा कहानी - प्रतियोगिता

[पुरस्कार पचास रुपए !]

★

★ चन्दामामा के पाठक इस प्रतियोगिता में भाग लें।

★ प्रतियोगिता में भेजी जाने वाली कहानियाँ, चाहे पुरानी बातों को लेकर रचि जाएँ, या आधुनिक बातों को लेकर, चाहे सुखान्त या हों दुखान्त, दुस्साहसिक हों या सुन्दर हास्य-विनोद के ऊपर आधारित, हों। वह इसके पहले प्रकाशित न हुई हों, और नए तर्ज की हों।

★ एक आदमी कई कहानियाँ भेज सकता है। कहानी चन्दामामा के आठ पन्नों से ज्यादा की न हो। प्रतियोगिता के लिए आने वाली कहानियाँ मार्च की १५ तारीख तक हमें मिल जाएँ। उसके बाद आने वाली कहानियाँ अस्वीकृत होंगी !

★ हमारी चुनी हुई कहानियों पर प्रति कहानी पचास रुपए का पुरस्कार दिया जाएगा। बाकी कहानियाँ पर भी योगितानुसार यथोचित पारितोषिक दिया जाएगा।

★ पुरस्कृत कहानियाँ सुविधानुसार चन्दामामा में प्रकाशित होंगी। प्रकाशित होने के बाद ही पुरस्कार भेजा जायगा।

★ पुरस्कृत कहानियों पर चन्दामामा का अधिकार होगा। कहानियों के चुनाव में चन्दामामा के संचालक का निर्णय, अंतिम निर्णय होगा। इस संबन्ध में किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार जरूरी नहीं।

कहानियाँ भेजने का पता :

चन्दामामा प्रकाशन

वडपलनी :: मद्रास २६.

चन्दामामा
संपादक :
चक्रपाणी
अब चन्दामामा साढ़े-पाँच सालका हो रहा है। इस बीच में उसने क्या-क्या खेल खेले, क्या-क्या गीत गाए—यह सब पाठकों के सामने है। इस अङ्क से 'शब्द-वेधी' धारावाही कहानी समाप्त हो गई; और साथ ही 'धूमकेतु' ने अपना दौरा शुरू कर दिया है—जो अपने तिरंगे कलेवर से पाठकों को प्रफुल्लित करता रहेगा! पहले हमने जो 'नाटी लड़की' वाला तिरंगा-चित्र प्रकाशित किया था, उसको देख कर बहुत से पाठकों ने तिरंगे-चित्रों की माँग की। इसीलिए हम सुविधानुसार धारावाही कहानी को तीन रंगों में छापने का प्रयत्न करने जा रहे हैं। विश्वास है, हमारे पाठक इसका अभिनन्दन करेंगे।
वर्ष : 5
फरवरी 1954
अङ्क : 6

चश्मों की दूकान !

एक शहर में किसी समय था,
इक चश्मों का व्यापारी ;
अच्छे चश्मे फिट कर उसने,
नाम कमाया बड़ा ही भारी।

खोली फिर दूकान बड़ी इक,
बोर्ड भी उस पर बड़ा लगाया ;
'पढ़ने में हम मदद हैं करते'
उसने उस पर यह लिखवाया !

एक आदमी वहाँ पे आया—
और किसी से बात यह जानी ;
मन-ही-मन फिर खुश हो करके,
जाने की दूकान में ठानी !

'सचमुच क्या पढ़ने में भाई,
मदद हो करते--?' उसने पूछा
'हाँ, हाँ, अपना काम यही है—'
दूकानदार यह उससे बोला ।

चढ़ाके चश्मा आँखों पर इक,
किताब भी दे दी हाथ में उसके,
पूछा फिर यह दूकानदार ने—
'बताओ क्या तुम हो पढ़ सकते ?'

* * *

बोला तब वह ग्राहक उससे—
'फर्क नहीं कोई जान है पड़ता'
दूसरा चश्मा चढ़ाके पूछा—
'अब है आपको कैसा लगता ?'

'यह गिलास है बहुत कीमती
कहा दुकान्दार ने जब ऐसा'
बोला ग्राहक फिर भी लेकिन—
'पढ़ा नहीं कुछ मुझसे जाता !'

और बड़े पावर का चश्मा,
चढ़ाके पूछा—'अब देखो तो'
कहा दुकानदार से यह उसने,
'अन्तर है नहीं कुछ भी समझो !'

सोचा तब यह दुकानदार ने—
'नहीं आँखों में इसके है ज्योति,
फिर धीरे से उसने पूछा—
'आप ने कुछ है विद्या सीखी ?'

'अगर मैं पढ़ना जानता होता,
कष्ट तुम्हें क्यों देने आता ?'—
जल्दी से वह इतना कह कर,
चला गया दुकान से बाहर!!
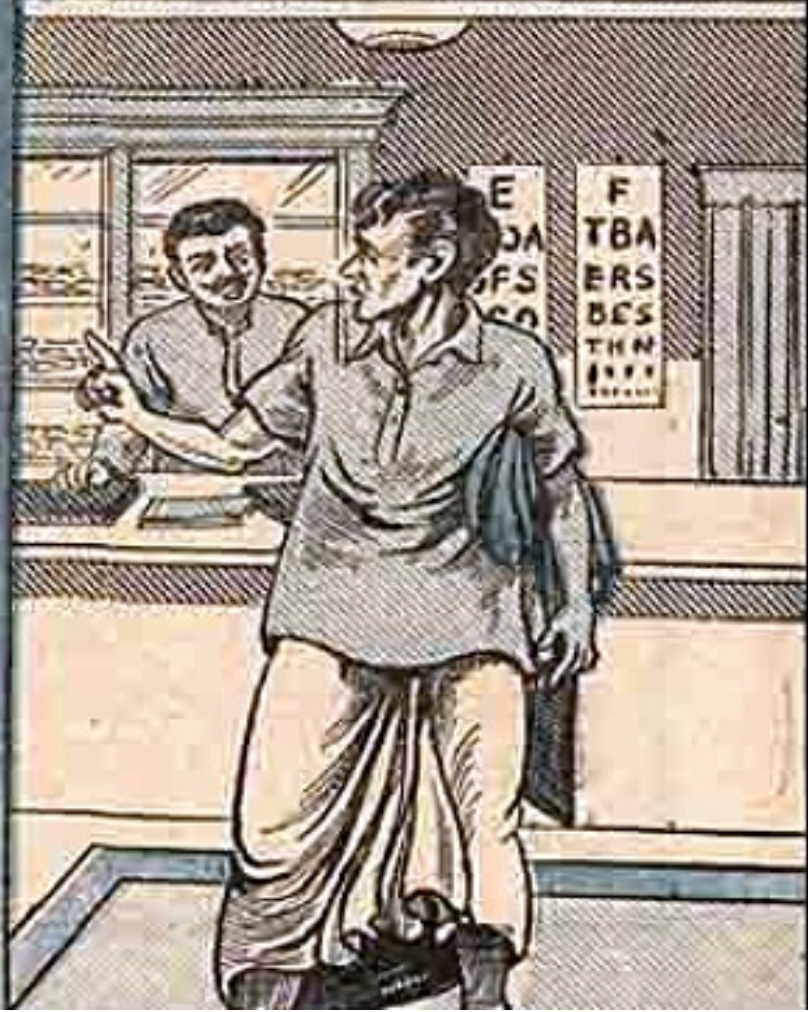
मुख-चित्र

*

एक दिन द्रोणाचार्य अपने शिष्य कौरव-पांडवों के साथ गंगा-तट से कहीं जा रहे थे। रास्ते में एक पीपल का पेड़ दीख पड़ा। उन्होंने अर्जुन को बुलाया और कहा— 'आज मैं तेल मर्दन के साथ स्नान करना चाहता हूँ; तेल और उबटन ले आओ।'

अर्जुन के जाते ही द्रोण ने दुर्योधन को बुलाकर कहा—'वत्स, तुमको मैं एक नई विद्या सिखाना चाहता हूँ—मनो-योग से सीखो'—ऐसा कह कर पीपल के पेड़ के नीचे उन्होंने एक चक्र बनाया और मंत्र का रहस्य बतला कर उस वृक्ष पर बाण मारने को कहा। दुर्योधन ने बाण मारा। पेड़ के सभी पत्तों में एक-एक छेद हो गया।

उस के बाद सब लोग गंगा में जाकर नहाने लगे। गुरु द्रोण अकेले रह गए। सहसा एक मगर उनका पैर पकड़ कर खींचने लगा। द्रोण का चिल्लाना सुन कर सब कौरव लोग दौड़े आए। उन्होंने अनेक प्रयत्न किए, फिर भी मगर ने उन्हें नहीं छोड़ा। यह देख कर सब निश्चेष्ट रह गए।

इतने में गुरुदेव के लिए तेल और उबटन लेकर अर्जुन पीपल के पेड़ के पास पहुँचा। पेड़ के सभी पत्तों को छिदे हुए देख कर वह चकित रह गया। नीचे देखा तो मंत्र-चक्र अंकित था। चक्र को देखते हुए अर्जुन ने अपने गांडीव से पेड़ पर निशाना छोड़ा; फौरन पत्तों में फिर एक-एक छेद हो गया।

अर्जुन जैसे ही गंगा में नहाने पहुँचा; गुरु द्रोण को मगर के मुँह में पड़ा पाया। उसने जो नई बाण-विद्या सीखी थी, उसका फौरन प्रयोग किया। बाण लगते ही मगर की देह में हजार छेद हो गए और वह फौरन मर गया।

उसके बाद सब लोग घर की ओर लौटे, तो पीपल के पत्तों में दो-दो छेद देख कर, द्रोण ने उसका कारण पूछा। अर्जुन ने स्वीकार किया कि यह उसी का काम है। इस प्रकार द्रोण ने सबों को बता दिया कि कौरव किस प्रकार उनकी विद्या भूल जाते है, और अर्जुन अपनी कोशिश से बगैर बताए ही, नई-नई विद्याएँ सीखता और उनका प्रयोग करता चलता है। इस उदाहरण से दोनों का बोधिक अन्तर स्पष्ट हो गया।

भला राजा

प्राचीनकाल में संग्राम सिंह नाम का एक राजा था। राज्य से जो आमदनी होती थी, उसमें से वह बहुत थोड़ी रकम अपने लिए रख कर, शेष सब-कुछ प्रजा के हितार्थ खर्च कर देता था।

कुछ गाँव की आमदनी उसने अपने लिए रख छोड़ी थी, और बाकी एक-एक गाँव की आमदनी को एक-एक काम के लिए सुरक्षित कर लिया गया था। यानी किसी गाँव की आमदनी भोजन के लिए, किसी की आमदनी कपड़ों के लिए और किसी गाँव को रानियों के लिए निश्चित कर लिया था। कभी-कभी फसल ठीक न होने से आमदनी कम हो जाती थी। आमदनी कम होते ही अपना खर्च भी कम करना पड़ता था। कुछ भी हो, अपने खर्च के लिए, प्रजा के निमित सुरक्षित धन में कभी हाथ नहीं लगाता था।

एक दिन राजा जब न्यायासन पर बैठा था, तो एक भाट आकर अपनी कविता सुनाने लगा। कविता सुन कर राजा बहुत खुश हुआ और अपने खर्च के लिए जो गाँव उसने रख छोड़े थे, उनके नाम सुना कर एक गाँव माँग लेने को कहा। भाट ने एक गाँव पसन्द किया और राजा ने फौरन दान-पत्र लिख दिया।

राजा को दही के साथ शकर मिला कर खाने की आदत पड़ी हुई थी। एक दिन संवत्सरादि के दिन राजा के रसोइयों ने बिना शकर डाले ही दही परोसा। यह देख कर राजा ने कहा—'शकर डालना क्या भूल गए?' यह सुन कर रसोइया हाथ जोड़ कर बोला—'महाराज, भूला तो नहीं, लेकिन आप के भोजन के लिए जो गाँव निश्चित था उसमें शकर के लिए जो खेत

राम बापू सक्सेना

सुरक्षित थे, उन्हें तो आपने किसी भाट को दान कर दिया है। इसलिए मन्त्री जी ने कहला भेजा है कि अब से आप को शकर नहीं मिलेगी!'

यह सुन कर राजा बोला—'हाँ! वह खेत तो मैंने उस भाट कवि को दे दिया है। इसलिए शकर खाना बन्द करता हूँ' उस दिन से राजा ने शकर खाने की आदत छोड़ दी। अपने कपड़ों पर भी राजा बहुत कम खर्च करता था। उसके लिए जो गाँव सुरक्षित थे, उसी की आमदनी से वह काम चलाता था। सामन्त राजाओं में एक जसवंत सिंह था, जो संग्राम सिंह का बड़ा स्नेही था। जसवंत सिंह की दृष्टि में राजा की पोशाक ओछी जान पड़ी।

स्नेह के कारण, समय देख कर, एक दिन जसवंत सिंह ने राजा के सामने अपना विचार यों व्यक्त किया—'जब आप ही इस तरह अनोखे ढङ्ग से कपड़े पहनने लगेंगे तो हमें भी तो आप का ही अनुसरण करना होगा!'

जसवंत सिंह ने जो कुछ कहा, संग्राम सिंह ने श्रद्धा के साथ सुना और फिर कहा—'अच्छा, वैसा ही करूँगा!' कह कर उस सामन्त-राज को संतुष्ट कर दिया। जसवंत सिंह ने जाकर दूसरे सामन्तों से भी ये बातें कहीं और सबों को इस ख्याल से प्रसन्नता हुई कि दिल्ली के बादशाह की तरह हमारे राजा भी अब तरह-तरह के जर्क-बर्क कपड़े पहनेंगे!

दूसरे दिन सबेरे उठते ही जसवंत सिंह सोचने लगा—'राजधानी में सब से बढ़िया कपड़े सीने वाला दर्जी कौन है?' इतने में संग्राम सिंह का दूत उसके पास आ पहुँचा और बोला—'हुजूर, आप का गाँव महाराज

नीलाम करवा रहे हैं!'—ऐसा कह कर वह चला गया।

जसवंत सिंह का कलेजा धड़क उठा—'मैंने ऐसा कौन सा अपराध किया है, कि मेरा गाँव नीलाम होने जा रहा है!' इस प्रकार वह सोचने लगा। यह उसे अच्छी तरह मालूम था, कि राजा बिना कारण कोई काम नहीं करता। लाख सिर मारा, लेकिन उसे कारण नहीं सूझ पड़ा। कारण क्या है खुद जाकर पूछ लेना बेहतर होगा। यह सोच कर वह राजा के पास गया और नमस्कार करके बोला—'महाराज, कृपा कर बताईए कि मेरा अपराध क्या है!'

संग्राम सिंह ने जवाब दिया—'तुम्हारा कोई अपराध नहीं; यह तुम्हारा गाँव जो नीलाम हो रहा है, उसका कारण बताता हूँ। कल रात मैंने हिसाब को जाँचा। मेरे गाँव से आनेवाली आमदनी में की रुपया अति जरूरी खर्च क्या है, वह दीखता आया है। तुमने जो मखमली पोशाक सिल्वाने को कहा, उसके लिए कहीं कोई रकम नहीं दीख पड़ी। और इस पोशाक के लिए प्रजा के पैसे खर्च किए जाएँ, यह मुझे पसंद नहीं। साथ ही पोशाक बनवाना छोड़ दूँ तो तुम्हारे जैसे परम आत्मीय की सलाह तिरस्कृत होती है। तुमको बुरा लगेगा, इसी लिए नई पोशाक बनवाने का खर्च जमा करने में यहाँ यह कुर्की और जब्ती ले आया हूँ।'

जसवंत सिंह के मुँह पर चाँटे से पड़ गए। गिड़-गिड़ा कर वह बोला—'महाराज, अभी हम जो पोशाक पहनते हैं, वही अच्छी है। इसको बदलने की जरूरत नहीं। मेरा गाँव मुझे वापस मिल जाय!' महाराज ने 'बहुत अच्छा!' कह कर उसे सहर्ष विदा कर दिया।

भूगोल की परीक्षा

★

नीचे कुछ नदियों के और उन प्रदेशों के नाम हैं जहाँ से यह नदियाँ बहती हैं। प्रदेश और नदियाँ अलग-अलग हैं। अब अपने भूगोल के अभ्यास को काम में लाओ। यदि ठीक ठीक पता लगाने में असमर्थ हो तो नीचे देखो—

१. अर्कांसा—इंडिया २. नील—स्पैन ३. इरावड्डी—अमेरिका
४. गुडाऽक्युविर—रूस ५. सिक्यांग—मिश्र ६. डार्लींग—बरमा
७. ब्रह्मपुत्रा—चीन ८. डेनपेयर—न्यू साऊथवाल्स

---

१. अमेरिका २. मिश्र ३. बरमा ४. स्पैन
५. चीन ६. न्यू साऊथवाल्स ७. इंडिया ८. रूस

प्राचीन-काल के कुछ कवि:

यह कुछ प्राचीन काल के कवियों के नाम हैं। परंतु भाषा एक दूसरे के सामने भिन्न हैं। इस भिन्नता को दूर करके देखो तो तुम्हारी जानकारी में बढ़ोती ही होगी। न कर सको तो नीचे देखो—

१. कालिदास—उर्दू २. गोइटे—हिन्दी ६. टेगोर—ग्रिक
४. तुलसीदास—इटेल्यिन ५. शेक्स्पीयर—जर्मनी
६. गालिब—संस्कृत ७. सादी—बङ्गाली ८. ह्युमर—इंगलिश
९. सुलीपेरघूमे—फारसी १०. दान्ते—फ्रांस

१.—संस्कृत २.—जर्मनी ३.—बंगाली ४.—हिन्दी ५.— इंगलिश
६.—उर्दू ७.—फारसी ८.—ग्रिक ९.— फ्रांस १०.—इटेल्यिन।

महाशासन

एक समय जब देवदत्त काशी का राजा था, भगवान बोधिसत्व उसके पुत्र के रूप में पैदा हुए। उसने इस बैटे का नाम रखा महाशासन और बड़े लाड़-प्यार से उसे पाला। फिर उसके यहाँ एक और पुत्र पैदा हुआ। उसने उसका नाम रखा सोमदत्त; और उसे भी बड़े जतन से पाला-पोसा।

इन पुत्रों के पैदा होने के दो साल बाद रानी का देहान्त हो गया। राजा ने एक दूसरी राज-पुत्री से ब्याह कर लिया। इस दूसरी रानी से भी उस के एक पुत्र पैदा हुआ।

पुत्रोत्पत्ति का समाचार सुन कर राजा फूला न समाया। उसने फौरन अपनी प्यारी। रानी को संदेश भेजा—'वह पुत्र-जन्मोत्सव की खुशी में जो वर माँगना चाहे, माँग ले।' इस पर रानी ने कहला भेजा—'अभी इसकी जरूरत नहीं है, जब मौका आएगा, तो मैं खुद सोचकर माँग लूँगी'

राजा ने कहा—'बहुत अच्छा!'

छोटी रानी के बेटे का नाम रखा गया 'आदित्य'। आदित्य दिन-दिन बढ़ने लगा, और राजपुत्र के योग्य सब विद्याएँ सीख कर निपुण और बड़ा हुआ।

इस बीच वह छोटी रानी एक दिन अपने पति के पास पहुँची और कहने लगी—'उस बार आप ने जो वर देने कहा था, अब उसके दान का समय आ गया है। मेरी इच्छा है कि मेरा पुत्र आदित्य युवराज बने।'

यह सुन कर राजा निश्चेष्ट हो गया। उसने कहा—'यह कैसा वर माँगती हो रानी! पटरानी के गर्भ से जो दो बड़े पुत्र पैदा हुए हैं, उनके रहते हुए, आदित्य कैसे युवराज

छोटे नारायन मिश्र

मेरे सामने तो यह कुछ नहीं कर सकती है। लेकिन अपने पुत्र को ध्यान में रख कर इन दोनों बड़े राजकुमारों को अनेक तरह से सता सकती है!' एक दिन उसने दोनों बड़े राजकुमारों को अलग बुला कर उनसे कहा—'बच्चो, मुझे डर है कि आगे तुम लोगों को कहीं कष्ट न भोगना पड़े। इसलिए अभी ही तुम लोग जंगल चले जाओ और किसी तरह गुज़र-बसर करो। मेरे बाद यह राज्य तुम्हीं को मिलेगा, तब आकर राज्य करना!' यों उसने उनको उपदेश दिया।

हो सकता है! कलह पैदा करने वाला यह काम अगर मैं करने लगूँ, तो क्या लोक में मेरी निन्दा नहीं होगी? क्या मैं वह निन्दा सहन कर सकूँगा? इसलिए मैं तुम्हारी यह माँग पूरी नहीं कर सकता!' राजा ने इस प्रकार अपना निश्चित अभिप्राय प्रगट कर दिया।

यद्यपि राजा ने साफ़-साफ़ इन्कार कर दिया था, फिर भी रानी ने उसकी कोई परवाह नहीं की। उसने न अपनी इच्छा छोड़ी, और न अपना ढंग ही छोड़ा।

इससे राजा ऊब उठा और सोचने लगा—'देखो तो इसकी ढिठाई और ज़िद।

पिता की आज्ञा सिर-आँखों पर चढ़ा करके महाशासन और सोमदत्त फ़ौरन घर से निकले और जङ्गल में चले गए। इन दोनों भाइयों को जाते हुए देख कर आदित्य भी उनके पीछे चल पड़ा। देश-देशान्तरों में भ्रमण करते हुए तीनों भाई हिमाचल प्रान्त के जङ्गलों में पहुँचे।

थके-माँदे होने के कारण तीनों एक पेड़ के नीचे बैठ कर सुस्ताने लगे। इसके बाद महाशासन ने सब से छोटे भाई आदित्य से कहा—'भाई, वह देखो—उस पहाड़ के नीचे जो पेड़ है, वहाँ एक तालाब है।

वहाँ जाकर अपनी प्यास बुझाओ। फिर कमल के पत्ते तोड़ कर उन से दोने बना लेना और हमारे लिए भी कुछ पानी ले आना।' ऐसा कह कर उसको पानी लाने भेज दिया।

बड़े भाई की आज्ञा के अनुसार आदित्य तलाब में पहुँचा। लेकिन एक पिशाच ने उसे पकड़ लिया और घसीट कर तालाब के नीचे अपने घर में ले गया।

बहुत देर हो गई और आदित्य को न आया देख कर महाशासन ने सोमदत्त को उसकी तलाश में भेजा। उस पिशाच ने उसको भी पकड़ लिया। जब सोमदत्त भी न आया तब महाशासन चिन्ता में पड़ा और खुद हाथ में तलवार लेकर तलाब की ओर चल पड़ा। वहाँ जाकर बहुत खोजा ढूँढा, पर भाइयों का कहीं पता नहीं चला। मालूम होता है, ये लोग किसी आफ़त में पड़ गए हैं!' यह सोचता हुआ महाशासन किनारे पर खड़ा हो गया। पिशाच ने सोचा कि यह तो बिना सोचे विचारे तालाब में नहीं उतरेगा।

'इस प्रकार काम नहीं चलेगा!' यह सोच कर उस पिशाच ने एक जङ्गली भील का वेश बनाया और उसके सामने आकर बड़े प्रेम से कहने लगा—'थके-माँदे दीखते हो भाई! इस तालाब का पानी बहुत मीठा है—पीकर प्यास बुझा लो न!'

यह बात सुन कर महाशासन बोला—'तुम्हारी बातों से तो यही मालूम होता है कि तुमने ही मेरे भाइयों को पकड़ रखा है।'

'बहुत खूब! मैंने ही पकड़ रखा है!' पिशाच ने ढिठाई से कहा।

'क्यों भला!'—महाशासन ने पूछा।

इस तालाब में जो प्राणी आते हैं, उनमें ज्ञानियों को छोड़ कर, बाकी सब मेरे वशी-

भूत हो जाते हैं। यह कुबेर महाराज की आज्ञा है!'—पिशाच ने कहा।

'तो क्या, सचमुच तुमको ज्ञानार्जन पर अनुराग है? अगर ऐसी आकांक्षा है, तो आओ—मैं तुम्हें उपदेश दूँगा'—महाशासक ने कहा।

'हाँ, मैं तैयार हूँ, उपदेश दो!'—भील ने कहा।

यह देख कर महाशासन कहने लगा—'तुम तो तैयार हो गए। लेकिन रास्ता चलने के कारण मैं बहुत थक गया हूँ, उपदेश देने लायक शक्ति मुझ में नहीं है!'

फौरन वह पिशाच महाशासन को अपने घर ले गया। थकावट दूर करने के लिए स्नान आदि का प्रबन्ध कर के उसे एक अच्छे आसन पर बिठाया और खुद आकर उसके पैरों के पास बैठ गया।

'भाई! तुमने जैसी इच्छा प्रगट की है, उसके मुताबिक मैं तुम्हें ज्ञानोपदेश दूँगा। श्रद्धा-भक्ति के साथ सुनो।'—महाशासन ने कहा।

तब वह भील अपनी असली सूरत में आ गया और बोला—'महात्मा, तुम सुज्ञानी हो; तुम्हारी बातों से मैं तृप्त हो गया हूँ। इसलिए मैं तुम्हारे दोनों भाइयों में से एक को छोड़ देने को तैयार हूँ! दोनों में से कौन चाहिए तुम्हें—बोलो!'

यह सुनते ही महाशासन ने कहा—'अच्छा, तो तुम आदित्य को छोड़ दो!'

यह सुन कर पिशाच बोला—'महानुभाव! बड़े के होते हुए तुम छोटे को क्यों चाहते हो? क्या, यह मुनासिब है। क्या बड़े का अपमान करना तुम्हें सुहाता है?' उस सवाल के जवाब में महाशासन कहने लगा—'ओ सज्जन प्रेतात्मा! मैं कभी भी धर्म-मार्ग से हट कर कोई बात नहीं करता। जब अपनी माता

के लिए मैं बचा हुआ हूँ, तो क्या मेरी छोटी माँ के लिए एक पुत्र न बचा रहे? उसे छोड़ दो, मेरे इस छोटे भाई के लिए ही उसकी माँ ने राज्य पाना चाहा था, लेकिन मेरे पिता को यह बात पसंद नहीं पड़ी। इसलिए उन्होंने हमें जङ्गल में भेज दिया। फिर जब हम जङ्गल जाने लगे, तो प्रेम के कारण यह अनजान बच्चा भी हमारे साथ हो लिया। और हमारे साथ अनेकों कष्ट उठाता रहा। ऐसे प्यारे छोटे भाई को छोड़ कर हम दोनों बड़े भाई, यदि नगर में प्रवेश करेंगे, तो क्या लोग हमसे पूछेंगे नहीं कि—आदित्य कहाँ है? उसके जवाब में अगर हम कहें कि उसको भूत खा गया, तो क्या कोई हमारी बात पर विश्वास करेगा?'

यह सुन कर पिशाच बोला—'महात्मा! तुम केवल ज्ञानी ही नहीं हो; तुम्हारे आचरण में भी धर्म प्रत्यक्ष हो रहा है।' यह कहते हुए वह पिशाच गद्गद हो गया और महाशासन के दोनों भाइयों को लाकर उसके सामने खड़ा कर दिया। इतना ही नहीं, उस दिन से तीनों भाइयों ने उस पिशाच के साथ मित्रता स्थापित कर ली और वहीं अतिथि की तरह रहने लग गए। कुछ दिनों के बाद देवदत्त के मरने की खबर मिली। यह सुन कर महाशासन अपने भाइयों और उस पिशाच को साथ लेकर काशी पहुँचा।

फिर बड़ा भाई महाशासन गद्दी पर बैठा, दूसरा भाई उसका प्रतिनिधि हुआ और आदित्य, सेनापति बना दिया गया।

जिस पिशाच ने उसकी इतनी भलाई की थी, महाशासन उसे भुला नहीं सका। उस मित्र के लिए उसने एक अलग भवन बनवा दिया और भोजन आदि के प्रबन्ध के लिए नौकर-चाकरों को नियुक्त कर दिए।

मंत्री पद का झगड़ा

राम नगर में एक बगीचा था। उस बगीचे में एक बावड़ी और एक सुन्दर तालाब भी था। जहाँ देखो वहाँ अनेक प्रकार के रंग-बिरंगे, सुगंधित, आकर्षक और आनंद देने वाले फूल ही फूल खिले हुए थे।

इन सब फूलों का एक राजा था। वह हर रोज दरबार बुलाता था और न्याय भी करता था। वह राज्य 'राम-राज्य' के समान शांतिमय था।

एक दिन वहाँ एकाएक हल-चल मच गई। कारण था इसका मंत्री पद। एक कोने में लगे 'केवड़े' ने बड़ी शान से उठ कर कहा—'मेरी खुशबू बहुत दूर तक जाती है। मेरे जैसा सुगंधित फूल और कौन है? यह सब लोग जानते हैं। इस लिए मैं ही बड़ा हूँ!' केवड़े की बात सुन कर जल में रहने वाला 'कमल' बाहर निकला और कहने लगा—'तुम्हारे शरीर में इतने काँटे उगे हुए हैं, फिर भी तुम बड़े बन कर निकले हो! देखो, मैं कितना सुन्दर हूँ, कितना आकर्षक हूँ, मुझे राज-महलों के अन्तःपुर में रानियाँ कितना आग्रह पूर्वक रखती हैं, क्या यह तुम को मालूम नहीं?'

इस पर केवड़े ने गुस्से में आकर कहा—'सुन्दरता में तुम एक गुड़िया के समान दिखाई पड़ते हो, जो केवल शीशे की आलमारी में ही शोभा देती है। काँटे तो गुलाब में भी होते हैं; इस लिए जो बात करो, सोच-समझ कर करो।'

यह झगड़ा देख कर सभी फूल वहाँ दौड़ कर आ गए। कुछ केवड़े के पक्ष में बोलने लगे, तो कुछ कमल के पक्ष में शोर मचाते थे। यह बात राज दरबार तक गई। राजा इसका न्याय करने लगा।

कुमारी रूप माला

लेकिन राजा का न्यायाधीश शाम के समय यानी सूर्यास्त के बाद ही न्याय करता था। कमल और केवड़े का मुकदमा दूसरे दिन पेश हो वाला था। निश्चित समय के पहले ही बादी और प्रतिवादी दोनों अपने-अपने वकीलों के साथ वहाँ आ पहुँचे।

अँधेरे का समया मुकदमा पेश होने की सब तैयारी पूरी हो चुकी। न्यायाधीश आकर अपने आसन पर बैठ गए। कमल की तरफ से उसके वकील ने बताया–'हुजूर कमल के बारे में तो यह बात सब ही जानते हैं कि रात के वक्त उसका मुँह बन्द हो जाता है। इसलिए वह कुछ नहीं बोल सकता!' अतएव मैं अदालत से प्रार्थना करता हूँ, कि मुकदमा दिन के समय ही पेश किया जाए।'

बड़ी विकट समस्या आ खड़ी हुई! दिन में न्यायाधीश न्याय नहीं कर सकते और रात में बादी कमल बोल नहीं सकता! इसलिए मुकदमा दूसरे दिन के लिए स्थगित कर दिया गया। सब अपने अपने स्थान को लौट गए।

इतने में केवड़े को एक उपाय सूझ गया। बगीचे में रात में रोशनी देने वाला एक पत्ता था। वह दौड़ा हुआ उसके पास गया और बड़ी गम्भीरता पूर्वक मन्त्री-पद वाला सारा क़िस्सा उसे सुना कर बोला—'भाई, तुम मेरी सहायता करो; क्यों कि तुम तो सूर्यास्त के बाद भी रोशनी देते हो। जब चारों ओर अँधेरा हो जाए तब भी तुम न्यायालय को उजाला रखो। इसके लिए मैं तुम्हारा अत्यन्त कृतार्थ रहूँगा!' उसका गिड़गिड़ाना देख कर रोशनी देने वाले पत्ते ने भी हामी भर दी। यह काम करके केवड़ा खुश होता हुआ अपने स्थान पर चला गया, और अँधेरा होने की प्रतीक्षा करने लगा।
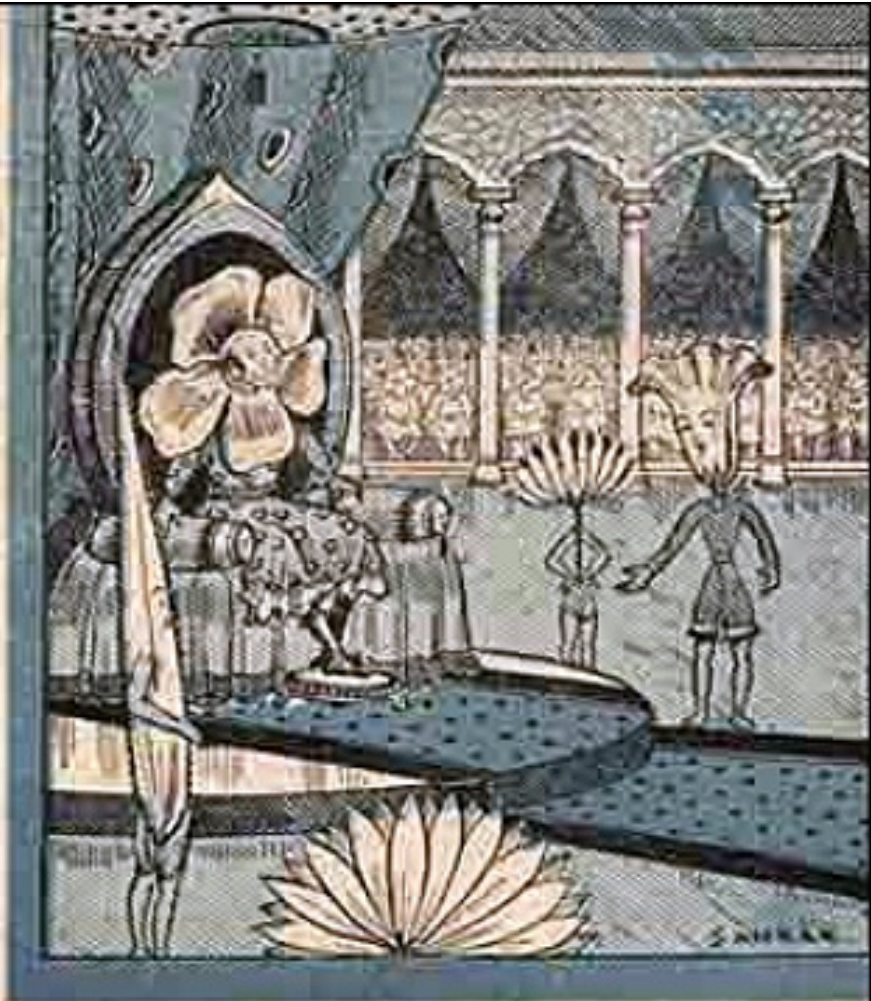
दूसरे दिन दरबार में सब जमा हुए। बड़ी देर हो गई, फिर भी अँधेरा नहीं हुआ। सब जगह रोशनी-ही-रोशनी फैली थी। न्यायाधीश को आते देख कर सब लोग आश्चर्य में पड़ गए।

वादी-प्रतिवादी में दोनों तरफ से, वाद-विवाद शुरू हुआ। न्यायाधीश ने सब-कुछ सुन कर अंत में यह फैसला सुनाया—'वादी और प्रतिवादी दोनों बहुत बड़े हैं। बहुत प्रसिद्ध हैं—एक में सुगन्ध है तो दूसरे में सुन्दरता। ये दोनों वस्तुएँ हमारे लिए आवश्यक हैं और इन दोनों वस्तुओं पर ही हमें गर्व भी है।'

इतने में राजा मुस्कराते हुए उठा और बोला—'यह फैसला बहुत ही उचित है। हम में एकता होनी चाहिए। नहीं तो मानव जाति हमारी फूट से लाभ उठाएगी। वे लोग हमें हमारी डालों पर से चुन-चुन कर माला बनाएँगे और छेद-छेद कर हमें सताएँगे। प्रतिष्ठित लोगों के गौरवार्थ के लिए वे हमें काम में लाएँगे। इस तरह हमारा नाश हो जाएगा। हमें अपनी स्थिति की रक्षा के लिए योग्य मन्त्री-मण्डल की जरूरत है। इसलिए अब मैं दोनों गुणों के प्रतिनिधि, यानी सुगन्ध के लिए केवड़ा और सुन्दरता के लिए कमल, इन दोनों को अपने राज्य में मन्त्री-पद पर नियुक्त करता हूँ और आप लोगों की सम्मति चाहता हूँ!'

इस फैसले से सभी फूल सहर्ष सम्मत हुए और राजा की जय-जय करते अपने-अपने स्थानों को लौट गए!

इसके बाद फिर कभी केवड़े और कमल में मंत्री-पद के लिए झगड़ा नहीं हुआ। बच्चों, देखा तुम ने—सुगंध और सुन्दरता ने किस प्रकार प्रधान पद प्राप्त कर लिया!

पुराने ज़माने में कुंडलनी नामक एक द्वीप था, जिसका राजा चित्रसेन था। चित्रसेन के राज-सिंहासन पर बैठने के दो बरस बाद से यह कहानी शुरू होती है। राजा की सब से बड़ी इच्छा थी, कि मेरे राज्य में सभी संपन्न और सुखी रहें, जिस से मेरा राज्य 'राम-राज्य' कहलाए! इसी आकांक्षा की पूर्ति के लिए महाराज चित्रसेन ने प्रजा पर से राज-कर का भार आधे से भी ज्यादा कम कर दिया।

राजा की यह न्याय-परायणता और उदारता-देख कर प्रजा बहुत ही प्रसन्न हुई। राज-कर के भार के कम हो जाने से प्रजा अत्यंत सुखी हो चली। राज्य में जहाँ भी देखो, चित्रसेन की न्याय-परायणता की ही धूम थी। देश के किसी भी कोने में जाइए, राजा की कीर्ति की ही चर्चा सुन पड़ती थी। इस प्रकार चतुर्दिक महाराजा चित्रसेन की प्रशंसा की दुंदुभि बजने लगी।

सब कुछ अच्छा ही था, लेकिन जैसे-जैसे राजा की प्रशंसा दसों-दिशाओं में फैलने लगी, वैसे-वैसे खजाने का धन घटने लगा। इस प्रकार दोनों हाथों से खर्च किया जाय, तो कुबेर का खज़ाना ही क्यों न हो, खाली हुए बगैर नहीं रहेगा। धन की कमी के कारण राज्य-शासन में अव्यवस्था फैल गई।

महाराज चित्रसेन का मन्त्री बुद्धिमान था वह राजा के संकल्प से भी खूब परिचित था।

और उस संकल्प के कारण भविष्य में जो होने वाला है, यह भी वह अच्छी तरह जानता था। इसलिए जब-जब उसे अवकाश मिलता, वह राजा के साथ इन सब बातों की चर्चा चला देता था। लेकिन राजा ने मन्त्री की एक न सुनी। महाराज चित्रसेन ने संकल्प किया था कि मैं अपने जीते जी अपनी प्रजा को सारे दुःखों से मुक्त कर दूँगा। मन्त्री ने अपनी सारी शक्ति लगा कर राजा को समझाया, लेकिन कुछ भी फायदा न हुआ। मन्त्री ऊब गया। खजाना खाली हो गया। यहाँ तक कि खजाने में एक पैसा भी नहीं रह गया! तब मन्त्री ने सोचा कि अब अगर मैं चुप रह गया तो भीषण आपत्ति का सामना करना पड़ेगा।

एक दिन मन्त्री महाराज के पास आया, और कहने लगा—'महाराज, आप के शासन में प्रजा बहुत ही सुखी है। लेकिन हमारा खजाना दिन-ब-दिन खाली होता जा रहा है। बगैर धन के कोई काम चलता नजर नहीं आता है। ऐसी हालत में मैं अपने मन्त्री-पद का निर्वाह कैसे कर सकता हूँ! इसलिए आप मुझे इस जिम्मेदारी से मुक्त कर दीजिए!'

'क्या हालत इतनी बिगड़ गई है!' राजा ने पूछा।

'महाराज, मैं क्या कहूँ! कर्मचारियों और सैनिकों को वेतन देने की अवधि एक सप्ता रह गई है। खजाने में जो कुछ रह गया है, वह बाग के मालियों के वेतन के लिए भी काफी नहीं होगा है!'—मन्त्री ने कहा।

'अच्छा, कल आम दरबार बुलाओ। देखो उसमें केवल राज्य के मन्त्री ही नहीं, देश के प्रतिष्ठित व्यक्ति भी बुलाए जायें!' राजा ने आज्ञा दी।

मन्त्री चला गया; लेकिन ऐसा करने में राजा का अभिप्राय क्या हो सकता है—वह नहीं समझ सका। जब खजाने खाली है तो नया कर लगाना ही चाहिए। मगर इस तरह दरबार लगा कर लोगों को जमा करने से क्या होगा! कुछ भी हो, राजा की आज्ञा का तो पालन करना ही होगा!

राज्य में ढिंढोरा पिटवाया गया। लेकिन प्रजा की समझ में कुछ न आया। तरह-तरह की अटकलें लगाई जाने लगीं। यह तो सभी जानते थे कि राजा दयालु-पुरुष हैं। इसलिए कुछ लोगों ने यह अफवाह फैला दी कि राजा राज-कर बिल्कुल हटाने जा रहे हैं!

भोली-भाली प्रजा ने इसे सच समझ लिया!

दूसरे दिन दरबार का अयोजन हुआ। मन्त्री-गण, मुख्य-कर्मचारी और राज्य के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति दरबार में हाजिर हुए। राज-सभा खचाखच भरी हुई थी। महाराज चित्रसेन ने दरबार में आकर आसन ग्रहण किया। राजा की आज्ञा के अनुसार प्रधान-मन्त्री ने लोगों से कहा—'हमारे महाराज का राजवंश दया-धर्म के लिए प्रसिद्ध है! वह प्रजा को अपनी संतान के समान देखता आया है। हमारे राज्य में राज-कर के नाम पर जो वसूल होता है वह नाम-मात्र का ही है; और अब तो हमारे दयालु महाराज चित्रसेन के शासन में वह राज-कर आधे से भी अधिक कम कर दिया गया है। यह तो सब को मालूम ही है। इस नाम-मात्र राज-कर से शासन कैसे चलाया जाय, आज हमारे लिए यह समस्या हो गई है!'
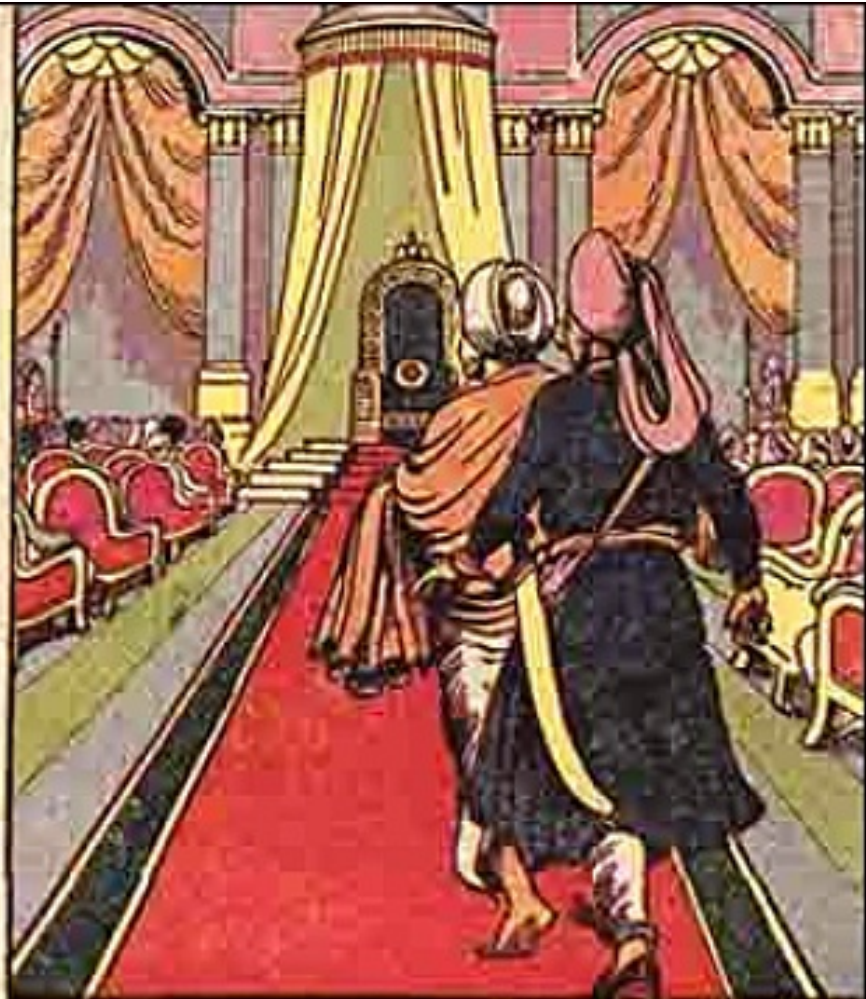
इतने में सभा में एक व्यक्ति खड़ा हुआ और बोला—'क्या बिना राज-कर के यह शासन चल नहीं सकता है?' यह प्रश्न सुन कर दरबार के सभी लोगचकित रह

उसके आक्रमण से सुरक्षित रखने के लिए सैनिकों की आवश्यकता भी होगी। इन सब कामों की पूर्ति के लिए कहाँ से और कैसे पैसे जुटाए जाएँ! इसलिए हर व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह यह जान ले कि राज-कर क्या चीज है और क्यों दिया जाता है!'

सब कुछ सुन कर महाराज चित्रसेन ने संकोच के साथ कहा—

'हमारे प्रधान-मन्त्री ने जो कुछ कहा, ठीक है। लेकिन एक बार राज-कर घटा देने के बाद अगर फिर से बढ़ाया जाय तो क्या हम पहले की तरह राज-कर वसूल कर सकेंगे?'

गए! प्रधान-मन्त्री की तो ऐसी हालत हो गई जैसे उसकी बुद्धि चकरा रही हो!

फिर भी वह धैर्य के साथ दिल को मजबूत करके बोलने लगा—'जरा सोचिए तो सही कि हमारे देश की जन-संख्या कितनी है! यदि हम सब को सुखी रखना चाहें तो हमको कितने काम करने हैं! जैसे प्रजा के स्वास्थ्य के लिए दवा-दारू का इन्तजाम और बच्चों की शिक्षा का प्रबन्ध तो करना ही होगा। अगर दूसरे देश का कोई राजा हमारे ऊपर चढ़ आया तो प्रजा को उसके भय से बचाने और राज्य को

दरबार में काना-फूसी शुरू हो गई। एक दरबारी ने साहस के साथ उठ कर कहा—'महाराज, घटाए हुए करों को बढ़ाना, एक बड़ी समस्या है। अभी देश-विदेश में आपकी जो कीर्ति फैल रही है, वह बात की बात में काफ़ूर हो जायगी। महाराज का वचन भङ्ग हो जाय, यह मामूली बात नहीं है! सोचिए, महाराज, खूब सोचिए!!'

इन बातों में राजा को बहुत बड़ी सचाई दीख पड़ी। गद्दी पर बैठने के बाद उसने जो कुछ यशोपार्जन किया है, वह सब एक

क्षण में नष्ट हो जाएगा। अतएव घटाए हुए कर को बढ़ाना किसी तरह संभव नहीं। इसके लिए दूसरा कोई उपाय खोज निकालना होगा—'एक बार हमने जो निश्चय किया, उसको हम बदलना नहीं चाहते—घटाए हुए करों को बढ़ाना नहीं चाहते। तब तो नये कर की कोई समस्या ही उत्पन्न नहीं होती! हमारा निर्णय तो आप की समझ में आ गया होगा। हमारे मन्त्रियों ने सारी परिस्थितियों का उल्लेख कर दिया है। अब इसके लिए आप लोग ही कोई मार्ग खोज निकालिए' इस प्रकार राजा ने कहा। सारा दरबार एकदम दंग हो गया; सब लोग एक दूसरे का मुँह ताकने लग गए! क्या जवाब देना चाहिए, किसी की समझ में नहीं आया। ऐसे समय में सेनापति समरसेन ने खड़े होकर कहा—'महाराज, खजाना भरना कोई बड़ी बात नहीं है। यदि आप चाहें तो मैं उसके लिए एक दूसरा रास्ता बता सकता हूँ। मगर वह एक बहुत रहस्य की बात है। इसलिए मैं वह बात एकान्त में ही बता सकता हूँ!'

बगीचे में ठीक रात के दस बजे एकान्त में सेनापति और महाराज के मिलने का प्रयोजन किया गया सेनापति के मुंह से जो बातें निकली उस से हर-एक दरबारी के मन में कुतूहल और जिज्ञास पैदा हो गई कि यह रहस्य क्या है! खैर, कल तो प्रकट हो ही जायगा! ऐसा सोच कर वे चुप रह गए।

निश्चय के अनुसार रात को ठीक दस बजे, सेनापति समरसेन बगीचे में जाकर एकान्त में राजा से मिला।

'महाराज राज-खजाना भरने के लिए इतने सोच-विचार करने की क्या जरूरत है! जब प्रजा से एक पैसा भी अधिक वसूल होने का मार्ग नहीं है; तब धन कहाँ से

लाया जाय और प्रजा को सुखी रख कर राम-राज्य की साख कैसे कायम रखी जाय! यही समस्या तो हमारे सामने है न! इस के लिए मेरी दृष्टि में एक ही उपाय है। हम दूसरे राज्यों पर धावा बोल दें और उन का खजाना लूट लें। इसी के लिए तो सेना और सेनापति रखे जाते हैं। यह भी तो राज-धर्म ही कहलाता है महाराज।'

'सेनापति तुम्हारा कहना ठीक है। हमारा राज्य एक द्वीप है हमारे चारों ओर समुद्र है। समुद्र को पार करके दूसरे राज्यों पर चढ़ाई करने के लिए हमें कितनी नौ-सेना और कितने जङ्गी-जहाजों की आवश्यकता पड़ेगी, जरा यह तो बताओ!' राजा ने पूछा।

—'इसका भार आप मेरे ऊपर छोड़ दीजिए।' सेनापति ने कहा।

'ठीक है, सारी जिम्मेदारी तुम्हारे कंधों पर रखता हूँ। यदि सेना जुटानी हुई तो प्रजा कहीं तुम्हारी बात माने या न माने, इसलिए मैं राज-मुद्रा तुम्हें देता हूँ।' कहते हुए राजा ने अपनी अंगूठी उसे दे दी।

सेनापति राजा से विदा लेकर चला गया। उसने सेना के मुख्य कर्मचारियों की बैठक बुलाई, और उनको सारी परिस्थिति बता दी। फिर अपना संदेह प्रगट किया। यह देख कर सैनिकों ने पूछा—'क्या बात है?'

'सेनापति ने कहा—कोई बात नहीं है। हम समुद्र पार कर दूसरे देशों पर चढ़ाई करने जाते हैं उनका खजाना लूटने, उन पर शासन करने नहीं। इस छोटे से काम के लिए क्या हमारी यह सेना ही काफ़ी नहीं है? लेकिन एक बात है, हम अगर अपनी सारी सेना को अपने देश से हटा लें, तो डर है कि प्रजा कहीं विद्रोह न कर बैठे। तब महाराज और उन के राज-परिवार की रक्षा कौन करेगा? सभा में से एक ने

उठ कर कहा—'यह तो बड़ी कठिन समस्या है।'

दूसरे ने कहा—'जिस राजा के पास सेना नहीं होती, उसको सदा डरना ही पड़ता है।'

तीसरे सैनिक ने, जिस की उम्र कुछ ढल चली थी, कहा—'सेनापति, देवी कुंडलनी की दया से मुझे एक उपाय सूझ गया है।' यह सुनकर सब ने उस के ऊपर अपनी दृष्टि केन्द्रित कर दी—

'देखो, अगर देश में क्रान्ति मचाना हो, तो उसके लिए युवकों की आवश्यकता होती है। अतएव हमें चाहिए कि किसी-न-किसी प्रकार हर एक युवक को अपनी सेना में भरती कर लें।' यह कह कर वह चुप हो गया।

सब को यह उपाय पसंद आया। फौरन ढिंढोरा पिटवा दिया गया 'कि पन्द्रह से पचास वर्ष तक के सभी युवक सेना में भरती हो जाएँ, इसके लिए आवश्यक आज्ञा-पत्र भी तैयार कर लिए गए।

दूसरे दिन से सैनिक वह आज्ञा-पत्र लेकर गाँव-गाँव में गए, और वहाँ के युवकों को सेना में भरती करने लगे। कुछ लोग सेना में भरती होने को तैयार नहीं हुए। बोले—'जो कुछ भी 'कर' आप लेना चाहें, ले लें; हम देने को तैयार हैं। लेकिन हम को जबर्दस्ती सेना में भरती मत करो; हमें माँ-बाप से, भाई-बहन से, दूर मत करो।' मगर उनकी कौन सुनने वाला था वहाँ? जो अपनी इच्छा से सेना में भरती हो गए, वे तो उनके साथ गए; और जो खुशी से भरती होने को राजी नहीं हुए उनके हाथ पैर बाँध कर, डोलियों में उठा ले गए। ऐसी हालत में सारी प्रजा राजा के पास पहुँची और फरियाद करने लगी।
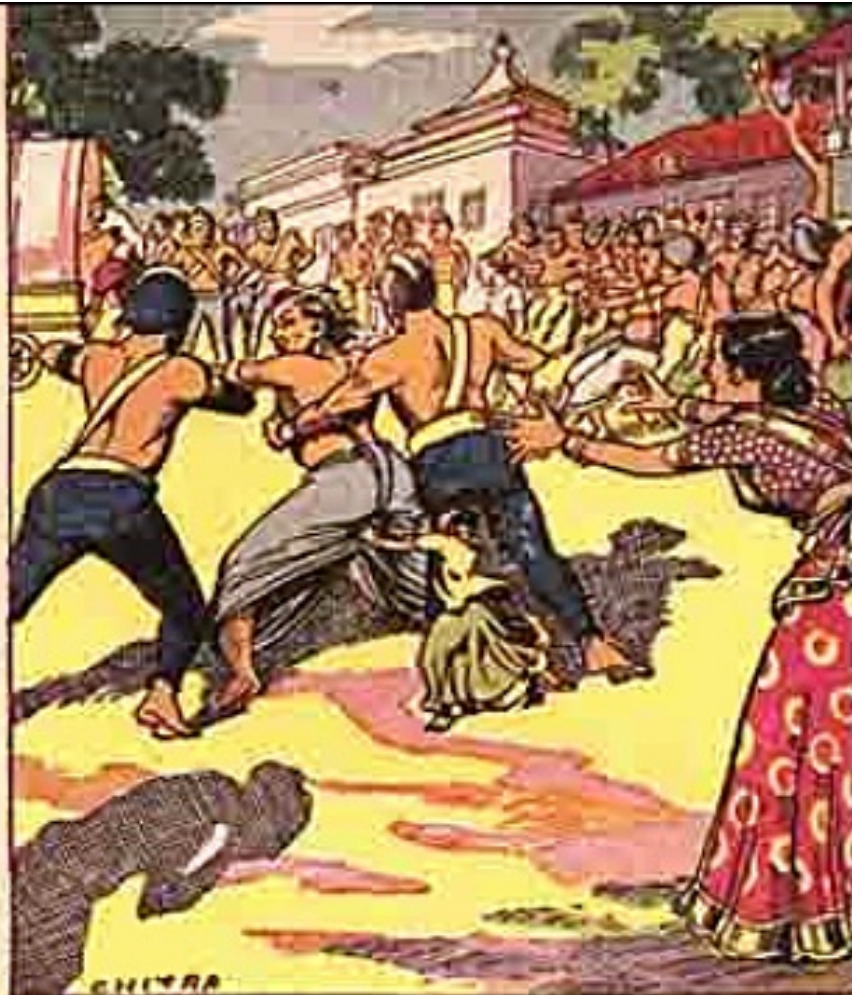
इस पर राजा ने कहा—'तुम लोगों ने मेरी प्रशंसा के गीत गाए, मेरी कीर्ति पर

काव्य रचना की, और मैं कर बढ़ाता हूँ, तो मुझे गाली-गलौज देते हो ! तो अब मुझसे कुछ नहीं हो सकता। वचन भंग करना हमारे वंशाचार के प्रतिकूल है ! ' सेना इकट्ठी की गई। एक शुभ-मुहुर्त में कुंडलनी-द्वीप की सेनाएँ जहाजों पर चढ़ गईं।

महाराज ने जैसे ही जहाजों के लंगर उठाने की आज्ञा दी, कि तो आकाश में दक्षिण दिशा की ओर तीव्रगति के साथ चमकता हुआ 'धूमकेतु' दिखाई पड़ा। यह देख कर सभी थर-थर काँपने लगे और 'अशुभ-अशुभ' की ध्वनि हर एक के मुहँ से अनायास निकल पड़ी।

राज्य के ज्योतिषियों ने सलाह दी कि अभी यात्रा रोक दी जाए।—कोई दूसरा मुहूर्त देखा जाएगा। ज्योतिषियों की इस सलाह पर सेनापति आग-बगूला हो गया।

'धूमकेतु की क्या हस्ती है ! वह क्या कर सकता है ! हमारे सैनिक बड़े प्रतापी हैं। ऐसी बेसिर-पैर की बातें सुन कर लोग हम पर हँसेंगे !'—सेनापति ने गरज कर कहा।

ज्योतिषियों ने बहुत कुछ समझाने की कोशिश की, पर कुछ भी फायदा नहीं हुआ। महाराज चित्रसेन ने भी सेनापति की ही बात का समर्थन किया। ज्योतिषियों की कुछ न चली, तब वे लोग उनके रास्ते से हट गए। सेना में कोलाहल मच गया, लेकिन उसकी किसी ने परवाह न की। आखिर सेनापति की आज्ञा से नाविकों ने जहाजों के पाल खोल दिए। दक्षिण दिशा में, जिस तरफ धूमकेतु निकला था, सारे जहाज उसी तरफ, तीर की तरह चल पड़े।

[अभी और है]

मोती मेरा

'विमला' सेठी

★

मोती मेरा बड़ा ही प्यारा
सब से अनोखा सब से न्यारा।
हरदम मेरे साथ है रहता
पूँछ हिला कर बात है कहता।

मित्रों के सङ्ग दौड़ लगाता
हाथ चाट कर प्यार जताता।
शत्रु को यों दूर भगाता
गुर्रा कर है काटने आता।

खूब खेलता गेंद है नटखट
पकड़ है लाता दौड़के झट पट।
दौड़ में है यह होड़ लगाता—
बड़े बड़ों से जीत है जाता।

उदास मुझे जब कभी है पाता
नहीं है तब यह शोर मचाता;
देख मुझे आँखें भर लाता—
सहानुभूति यों है जताता।

नए खेल मैं उसे सिखाता
शीघ्र है यह सीख भी जाता,
भले बुरे का ज्ञान इसे है
और इस पर अभिमान मुझे है।
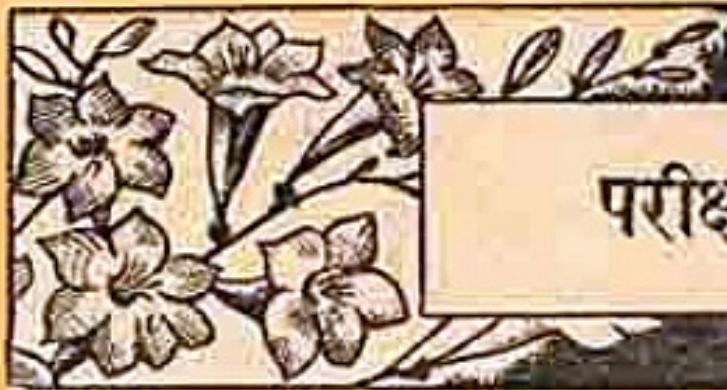
परीक्षा का प्रश्न पत्र

[सब मिला कर १०० नम्बर हैं। लेकिन नकल करने और हाथ की सफाई के लिए ५० नम्बर सुरक्षित हैं।]

परीक्षार्थियों के लिए नीचे दिए प्रश्नों में से एक-आध को छोड़ कर सब का उत्तर देना अनिवार्य है।

१. अगर दो रुपए मन के हिसाब से तीन सेर सोना खरीदा जाय—नहीं, ऐसा नहीं—अगर तीस रुपए मन के हिसाब से दो सेर सोना खरीदा जाए—नहीं यह भी उचित नहीं जान पड़ता! अच्छा, इस प्रश्न को छोड़ो! दूसरा प्रश्न ले लो—

२. हुमायूँ के पिता का नाम क्या था! (पिताजी—शाबाश!)

३. आगरे का ताजमहल किस नगर में है!

४. इस प्रश्न को भी छोड़ दो—क्योंकि यह बहुत कठिन है और तुम इसको हल करने में असमर्थ रहोगे।

५. आठ को पन्द्रह से गुणा करो—नहीं, नहीं—दोनों को जोड़ दो!

६. पलासी का युद्ध किस सन में हुआ था! (चेष्टा करके इसका ठीक उत्तर लिखो!) क्योंकि इस का ठीक उत्तर खुद हमें भी नहीं मालूम हो रहा है!

७. इन में से किन्हीं दो प्रश्नों का उत्तर दो। यदि जी नहीं चाहता हो तो इनको भी उड़ा जाओ—

(क) ऊँट की ग्रीवा लम्बी क्यों होती है!

(ख) आजकल दाल-आटे का क्या भाव है!

(ग) उल्लू को उल्लू किसलिए कहते हैं!

(घ) अमेरिका और बरतानिया कहाँ हैं! (खोजने परीक्षा-भवन से बाहर न जाना—!)

विनोद बिहारी

८. निम्नलिखित छंद का नाम-निर्देश करो:— आगे-पीछे दाएँ-बाएँ—काएँ-काएँ-काएँ-काएँ !

९. निम्नलिखित अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध वाक्यों में परिवर्तित करो:—

रेमा इर्भा स्कू हीनं याग—हीबि सामाई स्व ईग—मतु ने घूद यारि क्यों हीनं—निसेमा खेदने स्तेच हो ! जाम्र फ मका स्क रप तम ड़ोछ !

१०. निम्नलिखित में से किसी एक पर चटपटा-सा एक निबन्ध लिख डालो—निबन्ध चार पन्ने का हो। एक पन्ने पर निबन्ध का विषय, एक पन्ने पर केवल 'श्रीराम' साफ़ अक्षरों में, एक पन्ने पर निबन्ध का शेष भाग और एक पन्ने पर परीक्षा संबन्धी अच्छा-सा कोई दोहा या छंद—परीक्षार्थी का नाम—पिता का नाम व पूरा पता।

(क) मिट्टी का तेल पीने से लाभ और हानि—

(ख) ताश खेलना उचित है या 'बच्चन' की कविता पढ़ना ?

(ग) हमारा प्यारा उल्लू—!

(घ) हाथी की सूँड़—

११. निम्नलिखित मुहावरों का अपने या किसी और के वाक्यों में प्रयोग करो :—

(क) चोंच से चोंच लड़ाना।

(ख) दुम में रस्सा बाँधना।

(ग) बुड्ढी घोड़ी लाल लगाम।

(घ) ऊँट रे ऊँट, तेरे बाप का क्या नाम ?

(ङ) आँख के अँधे, नाम नैनसुख !

(च) चिराग तले अँधेरा।

(छ) तन पर नहीं लत्ता, पान खाएँ अलबत्ता। (त) घर न द्वार, मियाँ मुहल्लेदार।

घर जाकर यह प्रश्न-पत्र अपने माता-पिता को मत दिखाना !

(हेड-मास्टर की आज्ञा से)

अंगोछा

अरावली पहाड़ों में चिन्दानंद नाम के एक महात्मा रहते थे। एक दिन जब वे अपनी कुटी में बैठे जप कर रहे थे, तब एक बारह बरस का लड़का डर के मारे दौड़ता हुआ उनके पास आया। उसको देख कर योगी ने पूछा—'कौन हो तुम? क्या बात है?' लड़के ने जवाब दिया—'मैं जैसलमीर के राजा ज्ञानदत्त का युवराज हूँ, और नाम है मेरा सुमेरदत्त। शत्रुओं ने हमारे दुर्ग पर कब्जा कर लिया और मेरे पिता को मार डाला। अब वे मेरा पीछा कर रहे हैं।

तुरत महात्मा ने एक अंगोछा लाकर उसे दिया और कहा—'तुम अपने कपड़ों को उतार डालो और इसे पहन लो।' राजकुमार ने वैसा ही किया। महात्मा ने उसके कपड़ों को ले जाकर कहीं सुरक्षित स्थान पर छिपा दिया और वापस आकर वे अपने स्थान पर बैठ गए।

फिर उन्हों ने युवराज से कहा—'अगर कोई तुम से तुम्हारा नाम पूछे तो कह देना—ब्रह्मप्रकाश' इतने में कई घुड़-सवारों के आने की आवाज सुनाई पड़ी। ब्रह्मप्रकाश ने कहा—'वे आ गए!' महात्मा ने कहा—'डरो मत, मेरे लिए एक आसन बिछा दो और तुम भी पास बैठ जाओ। दोनों साथ-साथ भोजन करेंगे।'

जब ये दोनों भोजन कर रहे थे, तो घुड़-सवार दरवाजा खोल कर अन्दर आ गए। महात्मा ने पूछा—'आप लोग कौन हैं?' उन लोगों को साथ-साथ भोजन करते हुए देख कर घुड़-सवारों को अपनी भूल मालूम हो गई; और उन्होंने हाथ जोड़ कर कहा—'क्षमा कीजिए महात्मा! हम यह

हरीहर ठाकुर

देखने आए थे कि कोई राजकुमार तो इस तरफ़ से नहीं गया है।' तब महात्मा ने कहा—'मैं अपना भोजन बनाने में व्यस्त था। मैंने तो किसी को देखा नहीं, क्यों अम्मकादा, जब तुम लकड़ियाँ चुनने गए थे, तो क्या तुमने किसी को देखा था?' इस पर उसने कहा—'जी नहीं गुरुदेव, आप को थोड़ा भात और दूँ क्या?

यह देख कर घुड़-सवार समझ गए कि, यह लड़का महात्मा का कोई ब्राह्मण शिष्य है, और वे वहाँ से चले गए। उनके जाने के बाद सुमेरदत्त ने महात्मा के पैरों पर गिर कर कहा—'गुरुदेव, आपने मेरे प्राण बचाए हैं! मैं आप का कृतज्ञ हूँ, कैसे यह ऋण चुका सकता हूँ?' 'ऋण किस बात का बेटा! तुम जितने दिन चाहो, यहाँ रह सकते हो। इसके बाद चले जाना और अपना राज्य शत्रुओं से वापस ले लेना!' महात्मा ने कहा।

तलवारों से खेलने वाला वीर कितने दिनों तक यों जङ्गलों में छिपा रहता! एक दिन सुमेरदत्त महात्मा के सामने जाकर बोला—'गुरुदेव! अब मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं यहाँ से जाऊँ और शत्रुओं से अपना राज्य

वापस ले लूँ'—'भगवान तुम्हारी सहायता करें' यह कह कर वे अपनी जगह से उठे और एक बुकनी देते हुए कहा—'यह लोहे को सोने में परिणत कर देने वाली बुकनी है। तुम्हें राज्य को वापस लेने में बहुत धन की आवश्यता होगी। उस समय यह बुकनी काम आएगी' सुमेरदत्त ने वह बुकनी ले ली और इच्छा प्रगट की—'इस अंगोछे को भी मैं अपने साथ ले जाना चाहता हूँ। आप की निशानी के रूप में यह मेरे पास रहेगा।' महात्मा ने उसे वह अंगोछा दे दिया। वह खुशी-खुशी वहाँ से चला गया।

चलते-चलते वह अपने मामा यज्ञदत्त के यहाँ पहुँचा। वहाँ पहुँच कर उसने अपनी माँ को भी देखा। वह शत्रु के भय से अपने भाई की शरण में आ गई थी। अपने बेटे को जीवित देख कर उसने कहा—'जैसे डाल पर खिल कर फूल मुर्झा जाते हैं, उसी प्रकार तुम्हारे शत्रुओं का भी नाश हो जाएगा!' इस पर सुमेरदत्त ने कहा—'कागों के कोसने से ढोर थोड़े ही मरते हैं माँ! इस समय तो शत्रुओं का नाश करने के लिए मुझे एक किला बनाने की जरूरत है। तभी मैं अपने सैनिकों को साथ लेकर उनपर आक्रमण कर सकता हूँ और जैसलमीर का राज्य उनसे वापस ले सकता हूँ। किला बनाने के लिए मामा से कह कर थोड़ी-सी जगह मुझे दिला दो।'

बहन भाई के पास गई और जब उससे यह बात बताई तो उसने सूखा जवाब दे दिया—'यहाँ जगह-वगह कुछ नहीं है—चले जाओ!' उसी समय एक आदमी बैल की खाल लेकर यज्ञदत्त को भेंट करने आया उसे देख कर सुमेरदत्त ने अपने मामा से कहा—'मुझे इतनी सी जगह दीजिए कि जहाँ यह खाल रख सकें!' यज्ञदत्त ने सुमेरदत्त को एक रेतीले मैदान की ओर उँगली उठाते हुए कहा—'जाकर उस मैदान में तुम अपने लिए जगह ले लो!' सुमेरदत्त की माँ ने बेटे की बात सुन कर पूछा—'इतनी-सी जगह लेकर तुम क्या करोगे बेटा!' तब सुमेरदत्त ने उस खाल के छोटे-छोटे टुकड़े कर दिए। फिर एक एक करके धागे में नत्थी करता गया। इस उपाय से उसने कई बीघे जमीन अपने लिए नाप ली।

यज्ञदत्त देखने आया तो सुमेरदत्त ने कहा—'यह तो पड़ती जमीन है और आपके किसी काम की भी नहीं' बात ठीक थी

थी. यह सोच कर यज्ञदत्त वहाँ से चला गया। दूसरे दिन से उसने किला बनाने का काम शुरू कर दिया। सबेरे सबेरे से लोहे लक्कड़ आने लगे। शाम को मजदूरों की मजदूरी देने के समय सुमेरदत्त महात्मा की दी हुई वह बुकनी काम में लाया और लोहे की चीजों को सोने में परिणत कर डाला। फिर उन्हें बेच-बेच कर मजदूरों की मजदूरी देता चला।

इस तरह कई महीने बीत गए। वहाँ एक सुन्दर किला तैयार हो गया। उस किले के सामने यज्ञदत्त का किला बहुत तुच्छ जँचने लगा! इससे उसे अपने भाँजे के प्रति ईर्ष्या पैदा हो गई! अपने सैनिकों को लेकर वह किले के सामने पहुँचा और सुमेरदत्त से कहा—'यह किला मेरी जमीन में बना है। इसलिए तुम इसे मेरे अधिकार में दे दो; नहीं तो परिणाम अच्छा नहीं होगा!' सुमेरदत्त की माँ ने कहा—'यह क्या भैया! तुम अपने ही भाँजे से लड़ने जा रहे हो! अगर तुम चाहते हो तो इसे ले सकते हो। लेकिन पहले भीतर चलो, हाथ-मुँह धोकर अपने सैनिकों के साथ भोजन कर लो!' यज्ञदत्त ने सोचा कि किला तो बड़ी आसानी से कब्जे में आ रहा है! सुमेरदत्त ने भी अपने मामा के सैनिकों का नाना प्रकार के भोजनों से संतृप्त किया। जब वे खूब पेट भरके भोजन कर चुके, तब हरेक को एक-एक धोती भी पहना दी।

जब वे उसे उठाने लगे तो वह बहुत भारी जान पड़ी! और जब वे पहनने लगे तो धोतीके छोर में कोई एक चीज बँधी हुई दीख पड़ी; खोल कर देखा तो सब में सौ-सौ मुहरें मिलीं! बड़े आश्चर्य के साथ सैनिकों ने सुमेरदत्त से पूछा—'ये मुहरें किस लिए?'

तब उसने जवाब दिया—'यह तुम लोगों का अगले महीने का आगाऊ वेतन है!'

तब सैनिकों ने पूछा—'हमारा वेतन आप क्यों दे रहे हैं—सो भी सौ-सौ मुहरें! जब कि हमारा असली वेतन दस-दस मुहरें ही हैं!' इस पर सुमेरदत्त ने कहा—'कोई हर्ज नहीं, रख लीजिए। कुछ ही दिनों में हम जैसलमीर पर चढ़ाई करने वाले हैं!' इस बात से सब सैनिक बहुत खुश हुए और सुमेरदत्त की भेंट सहर्ष स्वीकार कर ली।

इस प्रकार के लालच देकर सुमेरदत्त ने जब उन सैनिकों को राजी कर लिया, तब यज्ञदत्त को बड़ा गुस्सा आया और अपने सैनिकों से उसने कहा—'तुम लोग इस दुर्ग पर कब्जा करने आए हो या जैसलमीर पर चढ़ाई करने! अपना कर्तव्य भूल कर तुम लालच में पड़ गए हो और तुम लोग मेरे साथ द्रोह कर रहे हो!' इस पर सैनिकों ने कहा—'द्रोही आप हैं—हम नहीं! सुमेरदत्त ने बड़े कष्ट से यह किला बनाया है और आप इस पर अन्याय से अधिकार कर लेना चाहते हैं!' इस तरह अपने सैनिकों को अपने विरुद्ध होते देख कर, यज्ञदत्त भयभीत हो गया और लाचार होकर अपने दुर्ग को लौट गया! सुमेरदत्त ने उन सैनिकों के साथ-साथ कुछ और वीरों को भी अपने साथ मिला लिया।

फिर उनकी सहायता से जैसलमीर-दुर्ग पर चढ़ाई करके उसे जीत लिया।

उस दिन से जब सुमेरदत्त राज-दरबार में बैठता तो उसके कन्धे पर वह अंगोछा जरूर रहता था। मन्त्रियों ने उसका कारण पूछा, तो उसने कहा—'इस अंगोछा ने मेरे प्राण बचाए हैं!' यों कह कर उसने उस महात्मा की कहानी उन लोगों को कह सुनाई। उस समय से सुमेरदत्त और उसके वंश में कन्धे पर अंगोछे डालने की परमपरा चल पड़ी।

[विजयवर्मा बीसलपुर के स्वामी के प्रश्न का जवाब न दे कर घबरा-सा गया। कुछ देर के बाद उन्हों ने फिर वही प्रश्न किया। उसके बदले—आगे पढ़िए]

'मेरा नाम विजयवर्मा है'—सिर्फ इतना ही कह सका विजयवर्मा।

'तुम लोगों के बारे में क्या मुझे इतना ही जानना चाहिए'—बीसलपुर के स्वामी ने पूछा। इस के बाद व्यंग से यों कह बैठा—'तुम किस पक्ष वाले हो—बीसलपुर या कोसलपुर?'

'मैं बीसलपुर का पक्ष वाला हूँ'—विजयवर्मा ने गंभीरता से कहा।

'इसका कोई सबूत है?'—बीसलपुर के स्वामी ने सन्देह के स्वर में पूछा। लेकिन इतने में मुस्कराते हुए उसने कहा—'तुम पर मैं शक करता हूँ—ऐसा मत सोचना; आज की परिस्थिति ही ऐसी हो गई है, कि कौन किस समय कैसे बदल जाएगा—नहीं कहा जा सकता।'

उसके ऊपर सन्देह किया जा रहा है, यह देख कर विजयवर्मा को गुस्सा आ गया।

'सबूत के लिए मैं चन्द्र-दुर्गाधिपति को जानता हूँ और मेरे बारे में वे खूब अच्छी तरह से जानते हैं'—विजयवर्मा ने कहा।

चन्द्र-दुर्ग के मालिक का नाम कानों में पड़ते ही बीसलपुर के स्वामी का मुख-मण्डल प्रसन्नता से चमक उठा और उन्होंने कहा—

'अच्छा, तो अब तुम्हारे बारे में मुझे

कोई सन्देह नहीं रहा। अभी जो सेना है, उस से देवलपुर जीता जा सकता है। ऐसा मेरा अभिप्राय हो रहा है; मेरी अपेक्षा तुम पहले-से इस प्रान्त में रहने वाले हो, इसलिए मैं तुम्हारा अभिप्राय जानना चाहता हूँ। संकोच छोड़ कर बात करो।'

'हमारी सैनिक शक्ति कितनी है, यह मालूम हो जाए, तो मैं आप को कुछ सलाह दे सकता हूँ'—विजयवर्मा ने कहा।

'मेरे साथ घुड़-सवार और पैदल सिपाई मिला कर करीब कोई आठ-दस सौ सैनिक होंगे। शाम होते-होते करीब एक हजार सैनिकों के साथ चन्द्र-दुर्ग के मालिक भी हमारी सहायता को पहुँच जाएँगे—बीसलपुर के स्वामी ने कहा।

ऐसी हालत में अगर हम देवलपुर को पूरी तरह न भी जीत सकें; फिर भी शत्रुओं को एक दफ़ा अपनी पराजय पर सोचने के लिए विवश तो कर सकेंगे!' विजयवर्मा ने कहा।

'तो तुम्हारा अनुमान क्या है!'—बीसलपुर के स्वामी ने पूछा।

'जितनी जल्दी हम देवलपुर पर चढ़ाई कर सकें, जीतने में उतनी ही आसानी हो सकती है। देवलपुर और इस जङ्गल के बीच आधे कोस के खाली मैदान में अगर हम शत्रु की आँखों से बच कर छिप रहें, तो बिना हथियार के ही हम उन्हें छिन्न-भिन्न कर सकते हैं!'—विजयवर्मा ने कहा।

'बहुत अच्छा! धावे की तयारी करो; तुम इन सब बातों को अच्छी तरह जानते हो—इसलिए यह कार्य-भार तुम्हीं पर छोड़ता हूँ!' ऐसा कह कर बीसलपुर के स्वामी उठ खड़े हुए।

विजयवर्मा की आज्ञानुसार बीसलपुर का अश्वारोही सैनिक आगे बढ़ा। पीछे कतार बाँध कर पदल-सेना चली। विजयवर्मा और बीसलपुर के स्वामी उत्तम घोड़ों पर सवार

होकर सेना के आगे-आगे चलने लगे। कुछ देर में सारी सेना देवलपुर की तरफ जङ्गल के छोर पर पहुँची।

बीसलपुर के स्वामी के साथ विजयवर्मा बातचीत करने लगा—'पहले घुड़सवार तीर की तरह चल कर, हम उस खाली मैदान के पार देवलपुर की सरहद पर चढ़ जाएँ, उसके पीछे-पीछे पैदल सेना आ पहुँचे और तब आगे बढ़ा जाए!

बीसलपुर के स्वामी ने इसकी आज्ञा दे दी। सारे घुड़-सवार जङ्गल से बाहर आकर तीर की तरह सनसनाते हुए देवलपुर की ओर दौड़ पड़े; उसी समय देवलपुर में शंखनाद होने लगे! ज़ोर-ज़ोर से सिंघे धू-धू करने लगे और डङ्का गहराने लगा।

'हमारा आना शत्रुओं को मालूम हो गया! फिर भी कोई परवाह नहीं! अगर हम सब से पहले उस शहर के पास वाले घरों पर चढ़ाई कर दें, तो उनकी आड़ में शत्रुओं का मुकाबिला किया जा सकता है!'—विजयवर्मा ने कहा।

'अच्छी सूझ है! हम लोग नगर पर न चढ़ाई कर सकें; कम-से-कम नगर में घेरे तो रख सकें, यही बहुत है! शाम होते-होते चन्द्र-दुर्गाधिपति की सेना हमारी सहायता को पहुँच ही रही है! फिर हम सम्मिलित-शक्ति से शत्रु-सेना पर टूट पड़ेंगे!'—बीसलपुर के स्वामी ने जवाब दिया।

बीसलपुर का घुड़-सवार दल देवलपुर की सरहद के पास पहुँच गया। यह सब देख कर तो ऐसा मालूम होने लगा कि विजयवर्मा को कुछ सफलता मिल जाएगी।

'सहसा आए हुए आक्रमण के रोकने में भीमवर्मा की सेना असमर्थ रही और वे चार-चार पाँच-पाँच करके बीसलपुर के घुड़-सवारों का मुकाबला करने की कोशिश करने लगे।
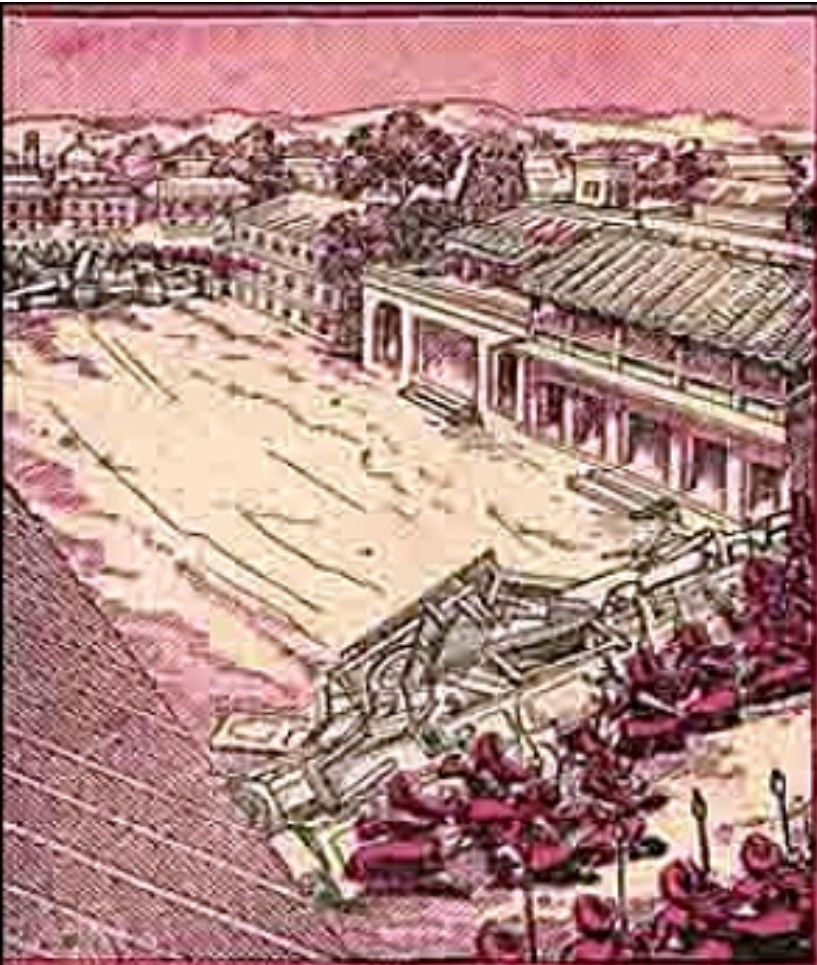
लेकिन इस तरह के प्रयत्न करने वाले सैनिक घुड़-सवारों की तलवारों के घाट उतरते गए। अब शहर में दूसरी-दूसरी जगहों में नगाड़ों की आवाज और सैनिकों का कोलाहल बढ़ गया। नगर के लोग डर और भय के कारण घर छोड़ कर भागने लगे।

भीमवर्मा अपने सैनिकों को जमा करते हुए उस भीड़-भाड़ में घूम रहा था। सभी चौराहों-नाकों को विजयवर्मा की सेना और घुड़-सवारों ने घेर लिया था।

सैनिकों ने सड़कों पर खड़े घर के दरवाज़ों को तोड़ना और घर के सब सामान निकाल कर सड़कों पर फेंकना शुरू कर दिए। कुर्सियाँ, पलङ्ग, किवाड़ जो कुछ मिलता था, ला-ला कर वे सड़कों पर ढेर करते जा रहे थे। धनुर्धारी पैदल-सेना; उसके पीछे घुड़-सवार आ-आ कर जमा होने लगे।

थोड़ी देर के बाद भीमवर्मा ने अपनी सेनाओं के साथ उनका मुकाबिला करना शुरू किया। एक ओर देवलपुर जमींदार के नायकतत्व में सेना खड़ी थी। रास्ते की ओर से भीमवर्मा और उसके अनुचरों के नायकतत्व में जो सेना खड़ी थी वह विजयवर्मा की सेना पर प्रचण्ड वेग के साथ बाण बरसाने लगी!

वहाँ मुकाबिला करने वाला, और सैनिक संचालन करने वाला भीमवर्मा ही है—यह बात विजयवर्मा को मालूम हो गई। कवच पहने, तलवार घुमाते, हुए भीमवर्मा अपने सिपाहियों को जोश दिला रहा था। विजयवर्मा को देखते ही वह चिल्ला उठा—'रामसिंह—वह है हमारा जानी-दुश्मन विजयवर्मा! अबकी इसे जीता नहीं छोड़ना है! तुम्हारी इच्छा—चाहे इसे जीवित बाँधो, चाहे सिर उतार लो!' इस प्रकार भीमवर्मा चीखने-चिल्लाने लगा।

रामसिंह का नाम सुनते ही विजयवर्मा

अवाक रह गया। वही रामसिंह जो उस का दिली-दोस्त था! शब्द-वेधी ने बूढ़े गंगू को जब बाण से मार डाला और उसके पास से जो पत्र निकला उस में रामसिंह के सोमनगर जलाने की बात लिखी थी। उसी दिन से धीरे-धीरे दोनों दोस्त एक दूसरे के प्रबल शत्रु हो गए।

आज जाकर उस से बदला लेने का मौका मिला—यह सोच कर विजयवर्मा बहुत खुश हुआ। इतने में सड़कों पर कोलाहल की ध्वनि बढ़ने लगी ओर एक कोने के घेरे को तोड़ कर रामसिंह अन्दर घुस आया। यह देखते ही विजयवर्मा उसके साथ द्वन्द्व-युद्ध करने को हाथ में तल्वार लिए कूद पड़ा। दो-चार क्षण बीतते ही लोगों को मालूम हो गया कि जीत किसकी होगी! एक-एक कदम पीछे हटते हुए हारा-थका रामसिंह अपनी सेना की ओर भागा! विजयवर्मा ने अप्रतिम उत्साह और पौरुष से तलवार नचाते हुए उसका पीछा किया।

भागते हुए रामसिंह के मार्ग में सड़क पर ढेर लगे समान सामने आ गए। उनको पार करके भागना उसके लिए मुश्किल हो गया! सैनिक लोग टकरा कर इधर-उधर

गिरने-पड़ने लग गए। ऐसे ही समय रामसिंह का पैर फिसला। जब तक वह सँभले-सँभले कि विजयवर्मा नङ्गी-तलवार लिए उसके सामने आ पहुंचा और एक ही वार में उसका सिर जमीन पर लोटने लग गया। वह दृश्य देख कर बीसलपुर के सैनिकों ने जय-जयकार मचाना शुरू कर दिया! भीमवर्मा के सिपाही सिर पर पैर रख कर भाग खड़े हुए! भीमवर्मा ने उन्हें कितना रोका और प्रोत्साहित किया; लेकिन उन भागते हुए कायरों के कानों में उसकी आवाज नहीं पहुँची!....

'तुम्हारे साहस और चातुर्य को देख कर मैं बहुत खुश हुआ। भीमवर्मा की

सेना सिर पर पाँव रख कर भागी जा रही है। मेरा ख्याल है अगर हम नर्मदा तीर वाले उस मुख्य मकान को घेर लें, तो हमारी जीत पूरी हो जाएगी। इसके बारे में तुम्हारी क्या राय है'—वीसलपुर के स्वामी ने पूछा।

'विजयवर्मा ने कुछ भी आगा पीछा किए बिना इस योजना को मंजूर कर लिया। नर्मदा तीर के उस बड़े भवन में ही करुणा कैदी बनी हुई है। विजयवर्मा के दिमाग में यह बात चक्कर काटने लगी, कि जितनी जल्दी होस के करुणा को वहाँ से छुड़ा लेने में ही भलाई है।'

लेकिन जब विजयवर्मा ने यह सोचा कि उसे उस भवन के लिए कितना भयंकर युद्ध करना पड़ा, तब उसे निराशा हुई। भवन के फाटक पर के मुकाबिले में और अन्दर की मुठ-भेड़ में बहुत-से सैनिक अब तक कट चुके थे। भवन के किस कोने में करुणा कैद है मालूम नहीं होने के कारण, विजयवर्मा भवन की हरेक कोठरी को सैनिकों के द्वारा तुड़वा कर खोजता चला। लेकिन हजार सिर मारने पर भी उस को करुणा का कहीं पता नहीं लगा।

निराश होकर जब वह महल से नीचे उतर रहा था, तो हठात् विजयवर्मा को एक ख्याल आ गया। सरासर सीने से चढ़ता हुआ वह भवन की आखरी सीढ़ी तक चला गया, और एक बुर्ज में से जङ्गल की ओर आतुरता से देखने लगा।

करीब चालीस-पचास घुड़सवार और कुछ पैदल सिपाही जङ्गल की ओर बेतहाशा भागे चले जा रहे थे। विजयवर्मा ने सोचा—'जरूर ये भीमवर्मा के ही आदमी होंगे और ये लोग अवश्य कैदी करुणा को भी साथ लिए जा रहे होंगे। इसका निश्चय होते ही विजयवर्मा ने अपने सैनिकों के साथ भीमवर्मा का पीछा किया, और आँधी की तरह चलता हुआ जङ्गल में घुस गया। फिर

थोड़ी ही देर बाद एक भयङ्कर मार-काट होने का कोलाहल उसके कानों में पड़ा।

विजयवर्मा को ऐसा लगा कि यह कोलाहल जङ्गल वाले उस देव-मन्दिर के पास ही हो रहा है। उसने अपने सैनिकों को उस मन्दिर की ओर चलने का आदेश दिया ही था, कि वह नाव वाला नाथूसिंह एक पेड़ पर से कूद कर विजयवर्मा के सामने आ खड़ा हुआ—

'भाई विजय, तुम्हारे लिए यही शुभ साइत है। भीमवर्मा के साथ चण्डीदास ने खुद मुकाबिला करने का संकल्प कर लिया है। चलो, जल्दी चलो!'—ऐसा कह कर वह उतावली मचाने लगा।

जब तक विजयवर्मा वहाँ पहुंचे-पहुँचे युद्ध करीब-करीब समाप्त हो चला था। भीमवर्मा के भागते हुए कुछ साथियों का पीछा करने के लिए चण्डीदास अपने साथियों को ललकार रहा था। उसको देख कर विजय वर्मा आतुरता से बोला—

'करुणा कहाँ है? भीमवर्मा और सोमशर्मा क्या भाग गए?' जवाब में चण्डीदास ठठा कर हँसा और बोला—'करुणा यहीं है। भीमवर्मा और सोमशर्मा अपने पापों का फल भोग कर स्वर्ग सिधार गए। तलवार की तीखी धार पर चढ़ कर दो टूक हो गए भीमवर्मा, और सामशर्मा के कलेजे को छेद कर निकल गया शब्दवेधी बाण। दोनों की लोथें यहीं जमीन में लोट रही हैं। लेकिन सोमनगर को जलाने वाला वह दुष्ट रामसिंह भाग बचा है।'

'राम सिंह भी बच नहीं सका। अभी थोड़ी देर पहले ही मैंने उसका काम तमाम कर दिया है!'—विजयवर्मा ने गर्व के साथ कहा। यह सुन कर चण्डीदास की खुशी का ठिकाना न रहा। 'लेकिन अब दुश्मन शेष नहीं रह गए। जिस दुष्ट ने

तुम्हारे पिता की हत्या की थी; उसको अपनी करनी का उचित फल भोगना पड़ा। मेरी इच्छा पूरी हो गई। अब बाकी रहा करुणा के साथ तुम्हारा विवाह। वह भी आज इस देव-मन्दिर में संपन्न हो जाए।' चण्डीदास ने कहा। वहीं, उसी समय, करुणा का विवाह विजयवर्मा के साथ हो गया। धनुर्धारी चण्डीदास और उसके संगी साथी बराती बन गए। वे ही लोग करुणा और विजयवर्मा के बन्धु बांधव भी थे।

जब सब के मुखों पर आनंद और उल्लास खेल रहा था, तब वह चण्डीदास कहने लगा—

'अब हम अपने नगर को जाते हैं वह सब भूमि तुम्हारे पिता की ही है। भीमवर्मा ने जिन महलों का सर्वनाश कर दिया था, उनका फिर से पुनरुद्धार किया जाए, और अब हम आनंद-पूर्वक जीवन बिताएँ!'

'तो फिर चन्द्रदुर्ग के मालिक से कब मिला, जाए; वे ही तो करुणा के पोषक पिता हैं।' विजयवर्मा ने आतुर होकर चण्डीदास से कहा।

'चन्द्रदुर्ग के मालिक से हम मिलेंगे और उनके पास विवाह की खबर भेज देंगे। सब से पहले सोमनगर को जाना है।' चण्डीदास ने कहा।

'तो मैं भी सोमनगर ही जाऊँगा। आज से मैं अपना गुप्त गृह छोड़े देता हूँ' नाथूसिंह ने कहा।

नाथूसिंह की बातें सुन कर सब लोग खिलखिला पड़े। विजयवर्मा और करुणा को बीच में रख कर उनके अगल-बगल नाथूसिंह और चण्डीदास चलने लगे। उनके पीछे-पीछे विजयनाद करते सैनिक सेवक और संगी साथी सोमनगर की ओर चल पड़े।

(समाप्त)

हाथी की सूँड

★

हाथी की 'नाक' इतनी लम्बी होती है कि उसके लिए एक अलग नाम रखना पड़ा।

हाथी की इस लम्बी नाक को ही सूँड कहते हैं। हाथी पैदल ही चलता है। यदि वह बस पर बैठ कर चले तो बस ही बे-बस हो जाय! बे-बस ही नहीं; धरती पर बैठ जाय—बैठ भी नहीं, बल्कि ऐंठ जाय—!

हाथी जब चलता है, तो अपने कई-कई मन के पैरों को भी साथ ही उठा कर चलता है। अगर किसी और जानवर के पैर इतने मोटे, और भारी होते तो वह चल भी नहीं पाता! केवल यही मालूम होता कि चार खम्भों पर कोई खड़ा हुआ है! हाथी के दाँत खाने के और—और दिखाने के और होते हैं। इसको महावत चाबुक या डंडे से नहीं चलाता, वह 'टार्ज़न' की तरह का एक छोटा बल्लम इसको चलाने के लिए अपने पास रखता है!

तुम को मालूम है ?

१. दुनियाँ का सब से बड़ा फूल इन्डोनेशिया में होता है। जिसका वजन, साढ़े आठ सेर होता है!

२. एक वैज्ञानिक का कहना है कि जिन आदमियों के सिर पर बाल नहीं होते, वे सिर पर बाल वाले आदमियों से अधिक बलवान और बुद्धिमान होते हैं! कारण, बालों के पैदा होने में अधिक पोषिक-शक्ति खर्च होती है!

३. आदमी के मस्तिष्क का वजन, तीन पाउन्ड, ग्यारह औंस होता है, और स्त्री के मस्तिष्क का वजन, दो पाउन्ड बारह औंस होता है!

करके देखो [पिंजड़े में तोता !]

*

एक अच्छा-सा गत्ता ले लो, उसे एक चित्र में दिखलाए गए की तरह काट डालो। गत्ते की एक ओर एक तोता बनाओ, फिर उसे उलट कर दूसरी तरफ पिंजड़ा बना दो। (दूसरे चित्र की तरह)

उसके बाद गत्ते में जहाँ चित्र बनाया गया है वहाँ दो छेद कर डालो। उन दोनो छेदों में लम्बे धागे घुसेड़ दो (तीसरे चित्र की तरह) दोनों हाथों से पकड़ कर धागे को ऐंठो और छोड़ दो।

अब गत्ता नीचे से ऊपर की ओर तेजी से घूमने लगेगा। पिंजड़े की तस्वीर और तोते की तस्वीर गत्ते दो ओर बनी रहने पर भी तेजी से घूमने के कारण दोनों चित्र एक ही तरफ मालूम होंगे, और पिंजड़े में तोता भी दीख पड़ेगा! (चौथे चित्र की तरह)
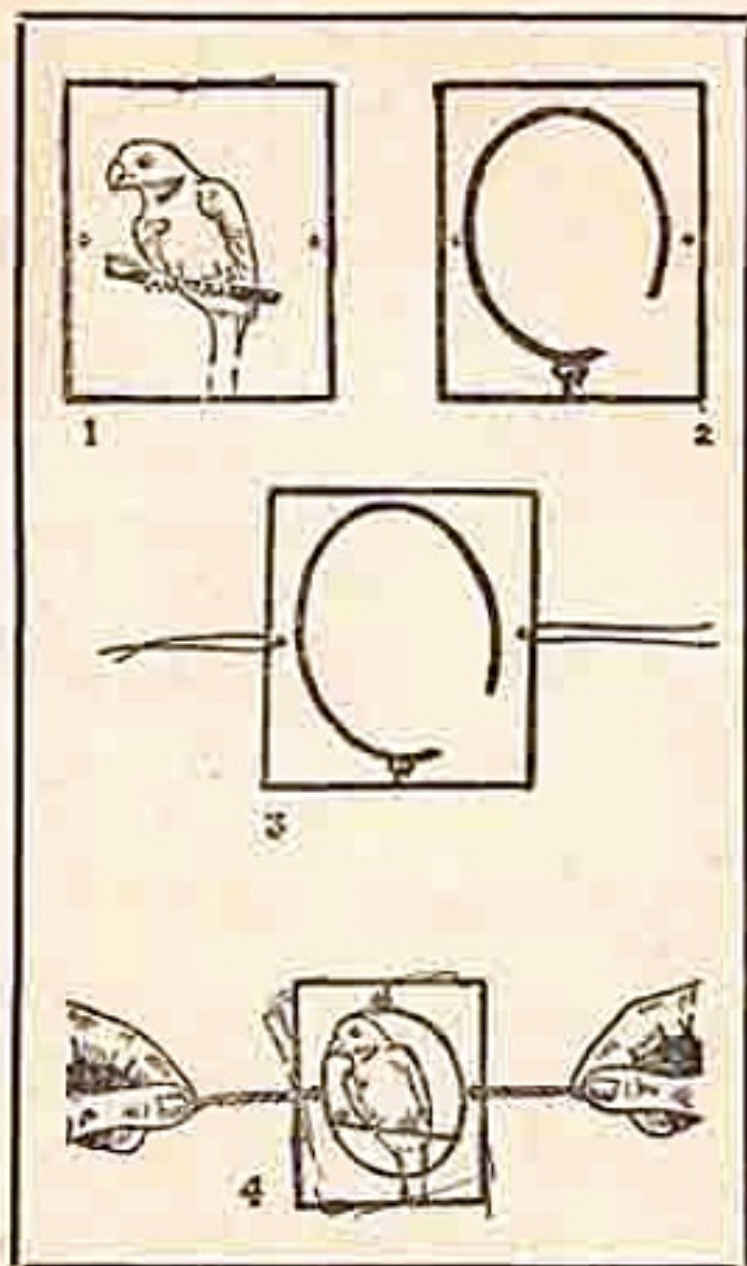
छोटूमल और मोटूमल दोनों सहोदर भाई थे। दोनों खेती-बारी करते थे। बहुत दिनों तक दोनों की अच्छी तरह निभती गई। लेकिन एक साल फसल मारी गई, और नतीजा यह हुआ कि देश में बहुत बड़ा अकाल पड़ा और लोग भूख से तड़पने लगे।

जब बड़े-बड़े धनवानों की दुर्गति होने लगी, तब साधारण किसान छोटू और मोटू की हालत क्या कही जाए? वे दोनों चने-चबेने खाकर किसी तरह दिन गुजारने लगे।

इस प्रकार चल रहा था, कि एक दिन बादल घिर आए। जब वे लोग चना-चबेना लाकर खाने जा रहे थे, कि उसी समय सामने वाले घर के ओसारे पर एक तोता दीख पड़ा। वह वर्षा में भीग गया था और सरदी के मारे थर-थर काँप रहा था। कहीं उड़ कर भी जा नहीं सकता था।

छोटे भाई छोटूमल ने उसकी हालत समझ ली। उसे उस तोते पर दया आ गई। बड़े भाई की आज्ञा लेकर वह तोते को पकड़ने आया। सूखी पत्तियाँ लाकर जलाईं और तोते का शरीर गरम किया। जब उसकी सर्दी कुछ कम हुई तो अपने हिस्से के चने के दानों में से कुछ उसके आगे बिखेर दिए। छोटूमल की सेवा से तोते की सिर्फ सरदी ही दूर नहीं हुई; उसकी भूख भी मिट गई और शरीर में कुछ ताकत भी आ गई।

कुछ होश में आने पर उस तोते ने आदमी की भाषा में पूछा—'भाई, छोटूमल! बोलो, तुम्हें क्या चाहिए?' यह सुन कर छोटूमल को बड़ा आश्चर्य हुआ। यह सब देख कर बाहर बैठा हुआ मोटूमल भी अन्दर आ गया। 'भाई मोटूमल! बोलो,

कुमारी किरन लता

तोता, हम लोग गरीबी में पड़ गए हैं, क्या हमारी यह गरीबी दूर कर सकोगे!'

इस पर तोता बोला—'यह कौन-सी बड़ी बात है! मैं द्वीपान्तर से फिर छह महीने में वापस आऊँगा। उस समय तुम्हारे लिए मैं एक चाँदी का पत्ता ले आऊँगा। उसे हिफाजत से रखोगे, तो तुम्हारे घर में हमेशा धन बरसता रहेगा!'

उसके बाद तोते ने छोट्टूमल से पूछा—'भाई, छोट्टूमल बोलो तुमको क्या चाहिए!' इस पर छोट्टूमल बोला—'तोता, क्या तुम ऐसा उपाय कर सकते हो, जिस से मेरा मन सदा संतुष्ट रहे!'

यह सुन कर तोता बोला—'यह कौन-सी बड़ी बात है! द्वीपान्तर से एक रंगीन पत्ता मैं तुम्हारे लिए ले आऊँगा। उसका रस तुम अपने रुमाल में निचोड़ कर सिर पर रख लेना। इस प्रकार जब तक वह रुमाल तुम्हारे सिर पर रहेगा, तुम्हारा मन परम संतुष्ट रहेगा!'

तोता द्वीपान्तर की ओर उड़ गया। छह महीने बीत गए। तोता फिर लौटा। उसकी चोंच में दो पत्ते थे। एक चाँदी का और दूसरा रंगीन।

क्या चाहिए तुम्हें!' तोते ने उस से भी पूछा। यह सुन कर मोट्टूमल ने आतुर होकर पूछा—'तोता तुम्हारा घर कहाँ है! तुमको आदमी की बोली किसने सिखाई!' तोते ने जवाब दिया—'मैं अपने तोतों के बड़े दल के साथ मिल कर द्वीपान्तर जा रहा था। वर्षा में पंख भींग गए और मैं उड़ न सकने के कारण लाचार होकर इस घर में पहुँचा। मेरे साथी लोग आगे जा रहे हैं; मुझे भी जाकर उन से मिल जाना है। कहो, तुम को क्या चाहिए!' इस पर मोट्टूमल ने कहा—'तो सुनो

तोते ने दोनों पत्तों में से चाँदी वाला पत्ता मोटूमल को, और रंगीन पत्ता छोटूमल को दे दिया। फिर कहा—'अब मैं जाता हूँ।' यह सुन कर दोनों भाइयों ने आग्रह के साथ कहा—'ठहरो-ठहरो, तोता, हमारे घर में भोजन कर के जाना।' इस पर तोता बोला—'अभी नहीं फिर कभी आ जाऊँगा मेरा दल बढ़ा जा रहा है मुझे जाना ही चाहिए' यह सुन कर मोटूमल ने कहा—'खैर! यह तो खा लो' ऐसा कह कर उसने अपने हिस्से में से कुछ चने उस के आगे रख दिए। चने चुग कर तोता उड़ गया।

मोटूमल ने चाँदी का पत्ता ले जाकर अपने गाँव के सुनार को दिखाया। उसने देख कर कहा—'यह तो चाँदी का पत्ता है तुम्हें कैसे मिला!' इसके जवाब में मोटूमल ने तोते और उसके द्वीपान्तर जाने-आने की कहानी विस्तार से कह सुनाई। यह बात एक कान से दूसरे कान में पड़ते-पड़ते गाँव के मालिक हनुमानसिंह के कानों तक पहुँची। उसने मोटूमल को बुलाया और उससे पूछ-ताछ करने लगा।

मोटूमल ने हनुमानसिंह को सारी बातें बता दीं। इतना ही कह कर वह चुप नहीं हुआ, और भी कहने लगा—'मेरा छोटा भाई भारी मूर्ख है! तोते ने जब उस से कुछ माँगने को कहा तो उसने सिर्फ एक रंगीन पत्ता माँगा'—यह भी बता दिया। इस पर गाँव के मालिक ने छोटूमल को बुलाया और रंगीन पत्ते को उस से लेकर देखा। छोटूमल के मुहँ पर मधुर हास्य खेल रहा था।
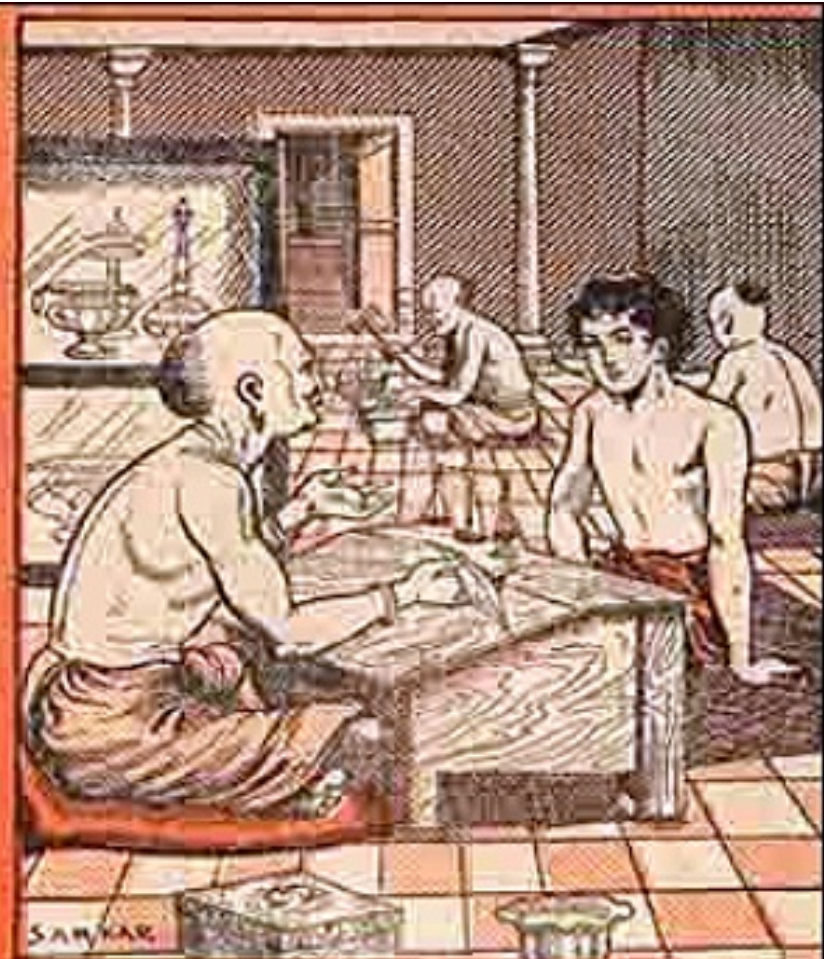
उसके बाद हनुमानसिंह ने धनवान मोटूमल को अपने पास बुलाया, और प्यार से कहा—'मैं अपनी बेटी के साथ धूम-धाम से तुम्हारी शादी कर दूँगा। मेरे बाद इस

समस्त धन-संपत्ति के मालिक तुम्हीं होगे। लेकिन अपने मूर्ख भाई से तुम किसी प्रकार का संबन्ध मत रखो!'

मोटूमल को बेहद खुशी हुई। गाँव के मालिक का वह दामाद हुआ। दादा-परदादा से रहते आए हुए उस फूस के घर को छोटे भाई को देकर वह ससुराल में घरजमाई होकर रहने लगा। ससुर जी ज्यों-ज्यों बूढ़े होते गए, त्यों त्यों खेती-बारी संभालने का सब काम मोटूमल पर पड़ता गया। वह इस काम में चतुर तो था ही, इसलिए पैदावार और पशु-पालन में उसने अच्छी तरक्की कर दिखाई। उसका घर धन-धान्य से पूर्ण होकर हँसने लगा।

संपत्ति के साथ मोटूमल का गाँव में सम्मान भी बढ़ा। अब उधर छोटूमल का हाल भी देख लिया जाय। बाप-दादों के दिए हुए घर में रहता था। हाथ में एक कानी कौड़ी भी नहीं थी! फिर खेती-बारी कैसे की जाती? रोज मेहनत-मजदूरी करके कुछ हासिल करता था। और फुर्सत के समय घास काट कर ले आता और उसे बेच कर गुजर-बसर करता था। किसी प्रकार की कोई चिंता न थी। मंद मुस्कान हमेशा उसके मुँह पर खेलती रहती थी।

लेकिन छोटूमल के मुख पर जो मुस्कान लहराती थी वह साधारण मुस्कान नहीं थी। वह बड़ी महिमामयी थी। उसके मुँह से बात निकलते ही सब का मन प्रसन्न हो जाता था। जहाँ वह रहता, वहाँ बीमारों की बीमारी दूर हो जाती थी। लोग दुख वेदना भूल जाते थे। जो लोग इस रहस्य को जानते थे वे उसे अपने गाँव में ले जाते और अनुनय-विनय करके कहते—'बोलो भाई छोटूमल!' इस प्रकार रहते-रहते राजा का जन्मोत्सव आया। राजा ने अपने अधीन सामंतों को उत्सव में

आने का हुक्म दिया। अब तो मोट्टमल ही अपने गांव का अधिकारी था। इसलिए मोट्टमल खूब सज-धज कर तैयार हुआ। उसकी स्त्री ने भी अपना सोलह श्रृंगार किया।

मोट्टमल अपनी स्त्री के साथ गाड़ी में सवार होकर चला। उसकी गाड़ी एक जङ्गल से होकर जा रही थी, कि डाकुओं का सरदार एक बूढ़े के वेश में वहां आया, और ज्योतिषि की तरह बातें करने लगा। मोट्टमल जो कुछ पूछता था, उसका वह धूर्त इस तरह जवाब देता था, कि मोट्टमल के आश्चर्य का ठिकाना न रहता था।

'मलिक, हो तो जरा सुंघनी देने की कृपा कीजिए' कहते हुए उसने हाथ पसार दिया। मोट्टमल ने अपनी चान्दी की डिबिया में से थोड़ी सी नस निकाल कर उसके हाथ में डाल दी। बूढ़े ने उसे आशीर्वाद देते हुए चुटकी से नस लेकर नाक में डाली, और छींक उठा। उसके छींकते ही, पास ही में छिपे हुए चार डाकू निकल आए। यह देख कर मोट्टमल और उसकी स्त्री घबरा गए!

चोरों ने आकर उन लोगों को घेर लिया— 'रुपया-पैसा, गहने-जेवर जो कुछ भी है निकाल कर देते हो या नहीं!' कहते हुए चमचमाती तलवारें दिखाने लग गए। कोई उपाय न देख कर जो कुछ उनके पास था, सब डाकुओं को दे दिया और सिर्फ पहने हुए कपड़ों के साथ पास, के एक पुरवे में रहने वाली एक बुढ़िया के घर में पहुँचे।

उधर उस राजा के एक ही लड़की थी। उसके लिए योग्य वर ढूँढने के वास्ते राजा ने चारों ओर दूतों को भेजा। लेकिन कुछ फायदा न हुआ। इसलिए राजा और रानी बहुत चिंतित रहने लगे।

किसी ने आकर रानी से कहा कि एक गाँव में छोट्टमल नाम का एक आदमी रहता है, जो

छोट्टूमल का हँस-मुख चेहरा देखते ही राजा खुशी से भर गया। 'अच्छा, कल बातचीत करेंगे!'—राजा ने कहा। छोट्टूमल के लिए एक अलग कमरा दिया गया। थका-माँदा होने के कारण उसे शीघ्र नींद आ गई। राजा की इच्छा से उसे और एक हफ्ते तक वहाँ रहना पड़ा।

इतने में खबर आई कि राज-कन्या के लिए योग्य वर मिल गया है। यह सुन कर राजा ने छोट्टूमल से कहा—'छोट्टूमल अभी कुछ दिन और रह जाओ, मेरी बेटी का ब्याह देख कर जाना!'

किसी की कैसी भी चिंता हो, बात की बात में दूर कर देता है!' फौरन राजा ने उसे ले आने की आज्ञा दी।

राजाज्ञा टाली नहीं जा सकती थी! इसलिए छोट्टूमल ने अपनी कमर में एक सफेद कपड़ा बाँधा, कंधे पर एक गमछा डाला, और सिर पर रंगीन पत्ते वाला रुमाल बाँध लिया। फिर एक लाठी हाथ में लेकर राजमहल में पहुँचा।

जब वह पहुँचा तो उस समय राज-नगर में बड़ी धूम धाम से राज-सभा चल रही थी। छोट्टूमल ने जाकर राजा के दर्शन किए।

छोट्टूमल एक दिन नहा रहा था, कि एक नौकर वहाँ आया और उस रुमाल को देख कर सोचने लगा—'ऐसा गन्दा रुमाल लेकर अन्तःपुर में यह जाएगा तो क्या सब का अपमान न होगा!' यह सोच कर उसने रंगीन पत्ते वाला रुमाल नदी में फेंक दिया।

नहा लेने के बाद छोट्टूमल ने नौकर से पूछा—'मेरा रूमाल क्या हुआ?' इस पर नौकर बोला—'राजा की इतनी बड़ी मेहरबानी तुम पर है! फिर उस गन्दे रुमाल की तुम्हें क्या चिन्ता! वह नदी की धारा में जाने कहाँ बह गया। महाराज से नया

रुमाल माँग लेना !' छोटूमल चिंतित-मन से नगर में गया

उस समय नगर में हो-हल्ला मचा हुआ था। राज कन्या को व्याहने के लिए वर के साथ जब वह बरात आ रही थी, तो एक बाघ झपटा और दूल्हे को घायल कर गया!' रुमाल तो उसके पास था नहीं; राजा को वह क्या मुँह दिखाता! इसलिए वह नदी किनारे चला गया और निश्चेष्ट होकर वहीं लेट रहा।

यों निश्चेष्ट लेटे हुए छोटूमल के मुख पर पानी छिड़क कर एक स्त्री एक पुराने रुमाल से पोंछ-पोंछ कर, उसे होश में लाने का प्रयत्न करने लगी—'पुराना है तो क्या हुआ! यह रुमाल अपने सिर पर बाँध लो, गरमी कम हो जायगी।'—उस स्त्री ने कहा।

छोटूमल को कुछ होश आया, तो उसने देखा कि वह स्त्री उसकी भाभी है और जो आदमी उसके पास बैठा है, वह उसका भाई मोटूमल है। लेकिन शर्म के मारे मोटूमल ने अपने भाई से कोई बात नहीं की! छोटूमल ने अपनी भाभी से पूछ-ताछ की, तो उसने जङ्गल में डाकुओं के द्वारा हुई अपनी दुर्गति का सारा हाल बता दिया। उसने यह भी बता दिया कि घाट पर उसे यह पुराना रुमाल मिला था। रुमाल सिर पर बाँधते ही छोटूमल का मुँह खिल उठा, तब उसे मालूम हुआ कि यह वही रंगीन पत्ते वाला रुमाल है!

उसके भाई ने अपना सब कुछ खो दिया था। भूख और प्यास से उसकी आँखें तिलमिला रही थीं। यह देख कर छोटूमल दौड़ा गया और पानी लाकर दोनों को पिलाया। फिर खाना लेने को वह नगर की ओर चला।

इतने में एक राज-दूत दौड़ा हुआ आया और बोला—'बाबूजी! आप को राजा ने तुरंत बुला भेजा है!' जब वह वहाँ

पहुँचा, तब मालूम हुआ कि 'जिसे बाघ ने घायल किया था वह दूल्हा नहीं, उसका नौकर निकला। सब कुछ ठीक है। बरात की पालकी आ रही है।' यह खबर जब मिली, तो सबों की खुशी का ठिकाना न रहा छोटूमल को देख कर राजा ने कहा—'अब तक कहाँ थे, छोटू?' 'नदी में स्नान करने चला गया था, महाराज!'—मन्द-मन्द मुस्कुरा कर छोटूमल ने कहा।

'वहाँ मेरे भाई और भाभी बड़ी मुश्किल में पड़े हुए हैं!' यह सुनते ही राजा ने फौरन पालकी भेज कर मोटूमल और उसकी स्त्री को बुलवा लिया।

राजा की बेटी की शादी बड़ी धूम-धाम से हो गई। छोटूमल और मोटूमल को राजा ने बहुत इनाम-इकराम दिए। इसके बाद दोनों भाई अपने घर की ओर चल पड़े। छोटूमल को राजा के यहाँ से जो कुछ मिला था वह सब अपने भाई को देकर बोला—'भैया, मेरे तो बाल-बच्चे नहीं हैं! यह सब लेकर मैं क्या करूँगा!' और अपने बाप-दादा के फूस के घर में जाकर सुख से रहने लगा। इस तरह दिन बीतने लगे। एक दिन वह तोता फिर आया और कहने लगा—'बोलो भाई छोटूमल, रंगीन पत्ता अच्छा या चांदी का पत्ता!'

इस पर छोटूमल बोला—'बाग में रंगीन पत्ता ही अच्छा लगता है। घर में स्त्री और बाल-बच्चों से ही शोभा होती है।' यह सुन कर तोता उसे आशीर्वाद देकर उड़ गया!

उसके बाद मोटूमल को ज्ञान हुआ, कि उसने छोटे भाई की उपेक्षा की! यह सोच कर उसे बड़ी आत्म-ग्लानि हुई! शीघ्र वह भाई के पास पहुँचा और गले से लग गया! उस दिन के बाद से दोनों भाइयों में कोई भेद-भाव नहीं पाया गया।

रंगीन चित्र कथा चित्र-पहला

कई हजार बरस पहले न यह गाँव थे और न यह नगर ही थे। जिन घोरारण्यों में पशु-पक्षी और क्रूर जानवर रहते थे, उन्हीं में मिल-जुल कर मनुष्य भी रहता था।

उसी तरह के एक घोरारण्य में एक परिवार था; सिर्फ एक स्त्री, एक पति, और दस साल का एक बच्चा—बस इतने ही लोग। लड़के का नाम था कृपाशङ्कर। वह बहुत फुर्तीला था। उस घोरारण्य में ऐसा कोई जानवर या पक्षी नहीं था, जिसको उस लड़के ने देखा न हो! बाघों का दहाड़ना, बन्दरों की चीख-पुकार, चिड़ियों की चेचहाहट— कृपाशङ्कर इन सब बातों से खूब परिचित था। इसके अलावा वह जानवरों के भाव और उन की बोली भी समझ लेता था।

एक दिन उसके माँ-बाप कहीं गए हुए थे। बाप का शिकार के लिए जाना, कन्द-मूल और फल जमा करने के लिए माँ का जाना भी जरूरी था। माँ-बाप के बाहर जाते ही कृपाशङ्कर अकेला दीवार से सटा हुआ बैठा था, कि जोर की आँधी आई।

आँधी आते ही, जङ्गल के सब जीव जन्तु कोलाहल कर उठे। कृपाशङ्कर की झोंपड़ी के पास के एक पेड़ के ऊपर रहने वाला एक बन्दर, खोखले में रहने वाला एक तोता, और उसी पेड़ फुँगी पर रहने वाली एक कोयल सब एक जगह जमा हो गए।

तीनों एक साथ पेड़ पर से उतरे और कृपाशङ्कर की झोंपड़ी में घुस गए। यह देख कर कृपाशङ्कर अचम्भे में पड़ गया। यह क्या!—आज तक किसी ने उस से बात नहीं की! कृपाशङ्कर से बन्दर ने अपने आने का कारण कहा। तोता अपनी बोली में बोला, कोयल ने भी वैसा ही किया! तब उसने कहा—'अच्छा, तुम यहीं आराम से रहो; माँ-बाप के आते ही मैं उनसे तुम लोगों की बातें बता दूँगा।'

यह सुन कर तीनों बहुत खुश हुए। बन्दर ने किलकारी मार कर कृपाशङ्कर का हाथ पकड़ लिया। तोता मौज से आकर उसके कँधे पर बैठ गया; कोयल उसके सिर पर जा बैठी और मीठे स्वर से कूकने लगी।

[उर्दू के लेखक पं. रतननाथ सरशार की अमर कीर्ति 'आजाद कथा' का एक पात्र महाशय खोजी भी हैं। यह यात्रा उनकी ही डायरी से ली गई है]

१६ नवम्बर १७९१—कल रात से कड़ाके का जाड़ा पड़ रहा है। सवेरे जब हम ने रात भर से जलते हुए दिए को फूँक मार कर बुझाने की चेष्टा की तो वह न बुझा। जाड़े के कारण उस की शिखा जम गई थी। आग पर गरम किया, तब फूँक मार कर बुझा।

सवेरे हमसे और आजाद से राजनीति पर चर्चा होती रही। लेकिन जाड़े के कारण शब्द बर्फ के जमे हुए टुकड़े बन कर मुँह से निकल रहे थे, जिन को हम आग पर गरम कर के देखते थे कि किसने क्या कहा।

(९ दिसम्बर १७९१) एक बार शिकार खेलते समय मैं ने हिरन के धोखे में शेर पर बन्दूक दाग दी। बाद में जैसे ही मुझे अपनी भूल मालूम हुई; मैं घोड़े पर सरपट भागा और शेर के पास पहुँचने के पहले ही गोली को रोक लिया।

(५ जनवरी १७९२) कल जङ्गल में अकेला शिकार खेल रहा था कि मुझे पीछे कान के पास कुछ सरसराहट सी मालूम हुई मुड़ कर जो देखा तो ग्यारह फुट का शेर खड़ा मुझे सूँघ रहा था। अब मैं कर ही क्या सकता था? एक ओर भागा, मगर वह शेर भी मेरे पीछे भागा। अब मैं उसके इतने निकट था कि बार-बार उसकी मूँछों का स्पर्श अपनी गर्दन में महसूस करता था।

सहसा सामने एक दीवार आ गई। मैं क्या करता? भागने की जगह न थी। एक दम मैं मुड़ गया और जैसे ही शेर

भगवान स्वरूप 'शौक'

मेरे पास आया, मैंने झट से उसके मुँह में अपना हाथ डाल दिया। वह हाथ पेट में होता उसकी पूँछ तक जा पहुँचा। फिर मैंने उसकी पूँछ पकड़ कर झटके से जो खींची तो सारा-का सारा शेर उलट गया। और उसी तेजी से पीछे की ओर भाग खड़ा हुआ।

(१३ फरवरी १७९२) आज सबेरे मैं जङ्गल में अकेला ही चला जा रहा था। रास्ते में एक शेर मिला। मैंने यों ही छेड़ खानी के लिए उसकी दाढ़ी को पकड़ कर खींचा—सच कहता हूँ उसकी दाढ़ी में शहद भरा हुआ था। घर आकर मैंने यह बात अपनी पत्नी से कही; तो उसने बताया कि यह घर के बच्चों की शरारत थी। घर में लकड़हारा शेर पर लकड़ियाँ लाद कर लाया था। बच्चों ने खाते समय उसकी दाढ़ी पकड़ कर खींची थी। मैंने बच्चों को खूब डाँटा कि अगर शेर काट खाता तो—

(५ मार्च १७९२) अरब में इतनी बड़ी-बड़ी 'घाटियाँ' हैं कि अगर आप उनके बीच खड़े हो कर आवाज लगाएँ तो करीब आध घंटे में वह आवाज लौट कर आती है। किन्तु इससे भी बड़ी एक 'घाटी' ईरान में थी। वहाँ आवाज के लौटने में पूरे बारह घंटे लगते थे। इसलिए मैं ज्यादातर रात को सोने के समय आवाज लगा देता था कि 'खोजी साहब उठिए सवेरा होगया' आवाज ठीक बारह घंटे बाद वापस आती थी और मैं उठ बैठता था!

(११ अप्रैल १७९२) यहाँ रूसी किसानों के पास इतनी बड़ी-बड़ी जमीनें हैं कि जब वे एक सिरे से बीज डालते हुए दूसरे सिरे पर पहुँचते हैं, तो पहले सिरे पर फसल पक कर तैयार हो जाती है।

टाइप-राइटिंग के चित्र

टी. वी. श्रीनिवास
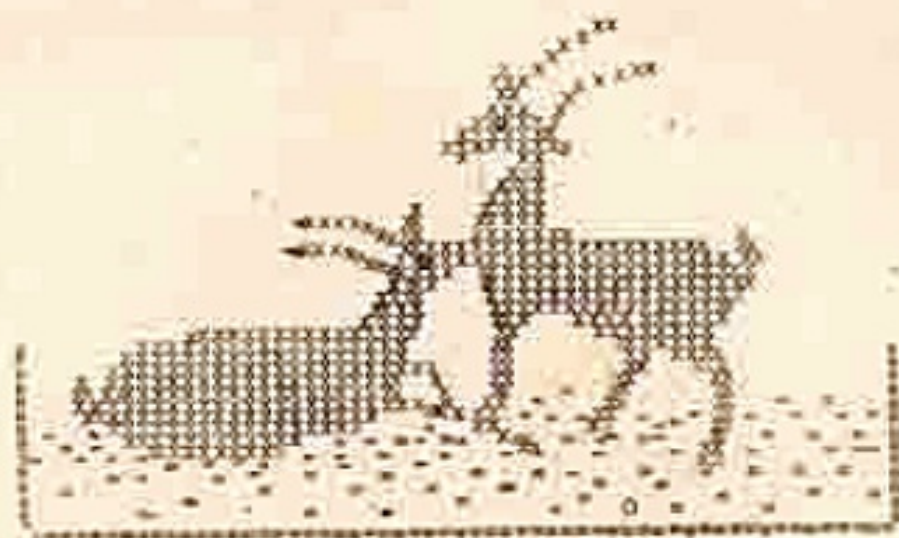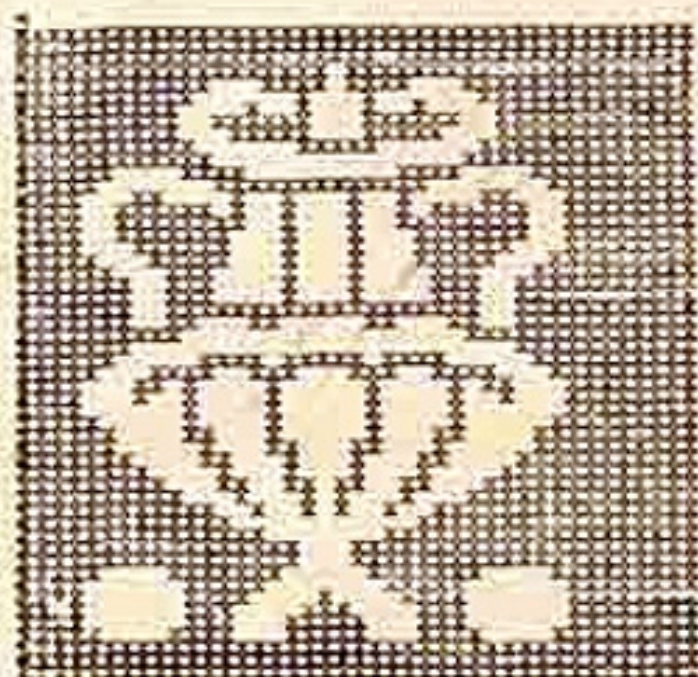
एन. गजलक्ष्मी

डी. मोहनलाल

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अप्रैल १९५४ :: पारितोषक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फोटो अप्रैल के अङ्क में छापे जाएँगे। इनके लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर-संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर

१० फरवरी के अन्दर ही निम्न-लिखित पते पर भेजनी चाहिए।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी : : मद्रास-२६

मार्च - प्रतियोगिता - फल

मार्च के फोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषकों को १०) का पुरस्कार मिलेगा।

पहला फोटो : निहारना दूसरा फोटो निहोरना

प्रेषक :- राजेन्द्र प्रकाश अग्रवाल, C/O नारायणदास राधारमन, नया शहर-इटावा.

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ प्रेषक के नाम सहित मार्च के चन्दामामा में प्रकाशित होंगी। उक्त अंक के प्रकाशित होते ही पुरस्कार की रकम भेज दी जाएगी।

चुटकुले

भाग्यवान…!

बीमा एजेन्ट : (अमीर आदमी से) महाशय जी ! आप जल्दी ही बीमा करा लीजिए। कल एक आदमी का हाथ टूट गया, उसे कंपनी ने पाँच हजार रुपए दिए हैं। संभव है कल आप के भाग्य भी जाग उठें!

अमीर आदमी : क्या आप मुझे इतनी जल्दी मार डालना चाहते हैं !!

—o—

ठीक जवाब !

डॉक्टर : (मित्रा से) बताओ, हम सवेरे मुँह क्यों धोते हैं ?

मित्रा : चाय पीने के लिए, और क्यों ?

—o—

गोली खाने का साहस !

डाक्टर : (रोगी से) तुम यह गोलियाँ खा लेना !

रोगी : (डाक्टर से) यदि गोली खाने का साहस होता, तो फौज में न भरती हो जाता !

—o—

और कहाँ से…!

(दो आदमी टेलीफोन पर बातें कर रहे थे)

पहला : महाशय जी ! आप कहाँ से बोल रहे हैं ?

दूसरा : और कहाँ से बोलूंगा, श्रीमान ! मुंह से बोल रहा हूं !

जो कुछ ही नहीं

जज : (चोर से) तुमने जो कुछ चुराया है, वह वापस कर दो !

चोर : मैंने 'जोकुछ' तो आज तक नहीं चुराया है हुजूर !

—o—

कमला की चिंता

माँ : (बेटी से) कमला ! तू सोती क्यों नहीं, क्या कल सवेरे स्कूल नहीं जाना है !

कमला : (माँ से) स्कूल जाने की चिंता ही तो, नहीं सोने दे रही है !

—o—

एक से बढ़के—

डाक्टर : (कंपाउन्डर) से जो रोगी आया है, वह नया है या पुराना !

कंपाउन्डर : नया ही होगा डाक्टर साहब ! पुराना तो हमारे पास कभी आता ही नहीं !!

—o—

टार्च की रोशनी

मास्टर : (मोहन से) 'नाम रोशन करने' के मुहावरे का वाक्य में प्रयोग करो।

मोहन : कल मैंने अपने पिताजी का नाम लिख कर टार्च की रोशनी डाली, तो उनका नाम रोशन हो गया !

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI CHAKRAPANI.

Photo by N. Thyagarajan

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

बर्तन में जल

प्रेषक
बनवारि महाजन आबू रोड

रङ्गीन चित्र कथा, चित्र-१